दिनकर का निबन्ध-साहित्य

दिनकर का निबन्ध साहित्य

सीमा गुप्ता

मूल्य : अस्सी रुपये मात्र

प्रथम संस्करण : 1990

प्रकाशक : कविता प्रकाशन, तेलीवाड़ा बीकानेर-334001

आवरण : हरि प्रकाश त्यागी

मुद्रक : पारस प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

DINKER KA NIBANDH SAHITYA

by Seema Gupta Price Rs. 80.00

प्राक्कथन

राष्ट्रीय चेतना के अमर-गायक युगद्रष्टा और युग स्रष्टा साहित्यकार श्री रामधारी सिंह दिनकर की गौरवान्वित कृतिया भारती के भण्डार की अमूल्य निधि है। बहुमुखी प्रतिभा के धनी दिनकर जी ने साहित्य की सभी प्रमुख विधाओ मे अपनी रचनाधर्मिता क कीर्तिमान स्थापित किये है। उन्होने मुख्यत प्रबध काव्य, प्रगीत, मुक्तक, सस्मरण, रेखाचित्र, बाल साहित्य, काव्य रूपक, डायरी, समालोचना, निबध आदि साहित्यिक विधाओ म सृजन किया। काव्य कृतिया यदि दिनकर जी की कारयित्री प्रतिभा की प्रतिमान हैं तो गद्य रचनाए उनके प्रखर विचारक रूप की प्रतिपादक है। विलक्षण व्यक्तित्व और बहुमुखी प्रतिभा क धनी श्री दिनकर ने लगभग अर्द्ध शताब्दी तक साहित्य साधना करके मनीषी स्रष्टा के रूप म अपनी पहचान हिन्दी साहित्य जगत् म बनाई है। ज्ञानपीठ पुरस्कार से अलकृत 'उर्वशी' काव्य रूपक क प्रणेता, 'कुरुक्षेत्र' प्रबध काव्य के यशस्वी रचयिता और 'सस्कृति के चार अध्याय' के लेखक क रूप मे अपार यश अर्जित करने वाले दिनकर जी के वैविध्यपूर्ण साहित्य का विविध दृष्टियो एव कोणो स अध्ययन-अनुशीलन किया गया है। दिनकर साहित्य से सबधित असख्य समीक्षापरक ग्रथ और गभीर शोध प्रबध भी लिखे गय हैं, जिनम उनक कृतित्व की सृजन प्रेरणा, रचना दृष्टि, शैली विधान, युगीन प्रभाव, कलात्मक वैभव, चरित्र-सृष्टि, बोध क विविध आयाम आदि उजागर हुए हैं। दिनकर जी का महाकवि, समीक्षक, प्रबुद्ध विचारक, रखाचित्रकार, सस्मरण लेखक, बाल-साहित्य प्रणेता, इतिहासकार और सस्कृति समीक्षक क रूप म अन्वेषण एव मूल्याकन किया गया है, किन्तु निबधकार के रूप म दिनकर जी की देन अल्प-ज्ञात ही है। प्रकारान्तर से यह कहा जा सकता है कि दिनकर जी प्रणीत निबध-साहित्य समीक्षको की दृष्टि से ओझल प्राय रहा है। इसीलिए दिनकर जी की निबध कला पर कोई स्वतत्र समीक्षात्मक ग्रथ उपलब्ध नही है। मैंने इस लघु शोध प्रबध के माध्यम से दिनकर जी के निबध साहित्य के अन्वेषण एव मूल्याकन का विनम्र प्रयास किया है। इस प्रयास म मैं कहा तक सफल हुई हू, इसका

मूल्याकन तो अधिकारी विद्वान ही करग। मुझे तो इतना ही सतोष है कि इस उपक्रम के माध्यम से एक अछूते विषय पर शोध काय करन का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

निबध विधा के रूप मे दिनकर जी द्वारा लिखित कृतिया इस प्रकार है—

1 रेती के फूल 2 वेणुवन, 3 अद्धनारीश्वर, 4 मिट्टी की ओर 5 शुद्ध कविता की खोज 6 साहित्यमुखी, 7 वट पीपल।

दिनकर जी के समीक्षात्मक निबध सग्रह इस प्रकार है—

1 काव्य की भूमिका, 2 पत प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त 3 हमारी सास्कृतिक एकता 4 सस्कृति के चार अध्याय 5 राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता 6 धम, नतिकता और विज्ञान, 7 राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गाधी जी।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबध म उल्लिखित प्रथम सात निबध सकलना को अन्वेषण एव मूल्याकन के लिए लिया गया है। वस्तुत सच्चे अर्थों म निबध विधा का प्रतिनिधित्व इन्ही सकलनो म हुआ है। अन्य सात सकलन समालोचना विधा के अन्तगत समायोजित किये जा सकत हैं।

दिनकर जी के निबध विषय वस्तु और शैली विधान दोनो ही दृष्टियो से स्वत पूण ह। इन्हे विषय की दृष्टि से यदि साहित्यिक, सामाजिक, सास्कृतिक एव ललित निबधो के रूप म वर्गीकृत किया जाता है तो शैलीगत आधार पर वणनात्मक, विवेचनात्मक गवेषणात्मक व्यक्तिव्यजक एव ललित निबध कहा जा सकता है। कवि और विचारक रूपो का समाहार होने के कारण दिनकर जी के निबधा म विचार तत्त्व के समानान्तर राग तत्त्व की भी धारा प्रवाहित होती रही है। दिनकर की निबध कला का निजी वैशिष्ट्य है, जिसे विषय की विवेचना से लेकर शलीगत निरूपण तक म सवत्र लक्षित किया जा सकता है। निबध के प्रतिपाद्य विषय की गहरी सूझ-बूझ के साथ साथ गहन सवेदना और अनुभूति का समाहार भी अपन निबधो म करते हैं। अस्तु विचार बोध की शुष्कता उनक निबधा म कही भी हावी नही होती है। निबधकार के रूप म दिनकर जी की सबस बडी सिद्धि और उपलब्धि यह है कि व विवेच्य विषय की तलस्पर्शी विशद् व्याख्या रागात्मक धरातल पर करत हैं। इसी विशषता क कारण दिनकर जी का निबधकार क रूप म निजी पहचान है। यह ग्रथ पाँच अध्यायो म विभक्त है।

प्रस्तुत शोध प्रबध का पूण करन म मुझ जिनस प्ररणा प्रोत्साहन और सहयोग मिला है उनक प्रति कृतज्ञता अर्पित करना मैं अपना पुनीत कत्तव्य मानती हू। सवप्रथम तो मैं मनीषी साहित्यकार दिनकर जी क प्रति ही कृतज्ञ हू जिनकी कृतियाँ इस लघु शोध प्रबध का मूलाधार बनी हैं। उन सभी विद्वान् सयकों का भी मैं नमन करती हू जिनकी कृतियों का सहायक ग्रथो क रूप म उपयोग किया है। यह लघु शोध प्रबध आधुनिक हिन्दी साहित्य क प्रबुद्ध अध्येता

डा० वेद शर्मा जी के निर्देशन मे लिखा गया है, उन्होंने जिस स्नेह और आत्मीयता से उत्साह सम्वर्द्धन करते हुए मार्गदर्शन किया उसके लिए मैं हृदय के गहनतल से उनकी आभारी हू। महाविद्यालय के प्राचार्य श्री रवि टिक्कू एव हिन्दी विभाग के समस्त प्राध्यापकों के प्रति भी मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हू। प्रस्तुत शोध विषय के चयन की प्रेरणा मुझे अपने पिताश्री डा० देवीप्रसाद गुप्त, हिन्दी विभागाध्यक्ष, डूगर कालेज, बीकानेर से प्राप्त हुई तथा इस शोध प्रबध को पूरा करने में प्रत्येक चरण पर अग्रज डा० उमाकात गुप्त से अतुलनीय सहायता मिली। इनके प्रति मैं श्रद्धावनत होकर शुभाशीष की कामना करती हू। परिवार के अन्य सदस्यों मे प्रेरणा और प्रोत्साहन प्रदान करने वाला म ममतामयी मम्मी जी श्रीमती सरला गुप्ता, बडी बहिन डा० श्रीमती निर्मला गुप्ता, आदरणिया भाभीजी श्रीमती रजनी गुप्ता, स्नेहमयी श्रीमती सुशीला शर्मा, श्रीयुत् प्रेमशकर शर्मा भाई डा०दिलीपकुमार मोदी एव चिरजीव जयकात, आयुष्मती कनु और बुआ त्रयी (श्रीमती विद्या देवी श्रीमती माया देवी तथा श्रीमती शिरोमणि देवी) का श्रद्धा एव स्नेह से स्मरण करते हुए मैं पुलकित हू।

इस ग्रन्थ के आकर्षक प्रकाशन के लिए कविता प्रकाशन के व्यवस्थापक श्री दिनेश रंगा तथा उनके सुपुत्रश्री धर्मेश रंगा के प्रति आभारी हू।

विजयदशमी 10 अक्तूबर, 1989
सरला सदन, जेलवेल,
बीकानेर (राजस्थान)

विनीता
—सीमा गुप्ता

अनुक्रम

1

रामधारी सिंह दिनकर : व्यक्तित्व और कृतित्व

जन्म व संस्कार

'विभा-पुत्र', 'जागरण-गान के गायक', 'विश्व को अक्षय आलोक प्रदान करने वाले', 'मर्त्य मानव की विजय के सूर्य और अपने समय के सूर्य के रूप में आत्म परिचय लेने वाले साहित्याकाश श्री रामधारीसिंह दिनकर का जन्म लगभग छप्पन वर्ष पूर्व बिहार के मुंगेर जिले के सिमरिया गाव के एक कृषक परिवार मे हुआ। अगरेजी कैलेण्डर से यह तारीख 30-9-1908 होती है और मा के अनुसार 'आसिन अजोर तेरह से सोरह फसली नवरात्रि के दिन बुधवार।[1] दिनकर जी का जन्मस्थान सिमरिया ग्राम शस्य-स्यामल खेतो, वृक्षो, आम्रकुजो और वेणु वनो के साथ-साथ दो नदियो—गगा और बाया से घिरा होने के फलस्वरूप रमणीय प्राकृतिक दृश्यो से समृद्ध है। ग्राम के बास-कुजो के प्रति तो उनका विशेष आकर्षण और अनुराग था इस विषय मे स्वय दिनकर जी के उद्गार दृष्टव्य हैं—' बास को देखकर मेरा हृदय उल्लास से भर जाता है। मेरी जन्म-स्थली मे बासो के बगीचे हमारे घर के पास ही थे। उन्ही के परिवेश म मेरा बचपन बीता था। अतएव बासा से मुझे प्यार है।" प्रकृति के सुरम्य रूप के साथ-साथ उसके भयावह रूप का भी दिनकर जी पर व्यापक प्रभाव पडा। दिनकर *जी का असली नाम 'रामधारीसिंह' था। 'दिनकर' उपनाम था, जो उन्होंने अपने* पिता श्री रविसिंह के नाम के अनुकरण पर रखा था। उनकी मा 'नूनू' कहती थी। घर मे सभी उन्ह 'मालिक' कहते थे। दिनकर जी का गोत्र 'सावर्णि' था।[2] वस्तुत दिनकर जी दिनकर के समान ही तेजस्वी एव ऊर्जस्वित थे।

---

1 प्रो० मुरलीधर श्रीवास्तव—युग कवि दिनकर, पृ० 1

2 प्रो० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 18

परिवार

दिनकर जी के पितामह का नाम श्री सकरसिंह था। उनका परिवार आर्थिक दृष्टि से निम्न-मध्यम वर्ग का था। दिनकर जी से पहले परिवार में उच्च शिक्षा का प्राय अभाव रहा। उनके परिवार में रामायण, महाभारत, गीता, पुराण आदि धार्मिक ग्रन्थों को महत्व दिया जाता था। दिनकर जी के पिता कृषक होते हुए भी उनके व्यवहार के कारण उन्हें आदर देते थे। दिनकर जी जब दो वर्ष के थे तभी उनके पिता का देहान्त हो गया। दिनकर जी के दो भाई थे। इनके नाम क्रमश हैं—अग्रज श्री वसन्तसिंह और अनुज श्री सत्यनारायण सिंह। दिनकर जी का विवाह पन्द्रह वर्ष की आयु में हो गया था। दिनकर जी के दो पुत्र, दो पुत्रियां थी।[1] दिनकर जी ने पैंसठ वर्ष की आयु में दो पुत्रियों, छह भतीजियों और दो पौत्रियों का विवाह किया। परिवार के प्रति मोह, साधु-सन्तों की महिमा में विश्वास, पशुपालन से प्रेम इत्यादि गुण इन्हें भारतीय ग्रामीण की कोटि में रखने के लिए पर्याप्त हैं। परिवार एवं गृहस्थी के लिए उनमें अत्यधिक मोह रहा।

उनकी पारिवारिक विषमता के कारण अच्छे-अच्छे साहित्यकारों यथा—भगवतीचरण वर्मा, मन्मथनाथ गुप्त आदि को सोचने पर बाध्य होना पड़ा कि दिनकर इतनी दुखद स्थिति में इतनी सुन्दर रचनाएं किस प्रकार करते हैं।[2] इस विषय में श्री प्रफुल्लचन्द ओझा का कथन उल्लेखनीय है कि —"दिनकर जिस पारिवारिक परिवेश में रहने को मजबूर थे, उसमें पढ़ने-लिखने की बात तो दर किनार, कोई जीवित भी कैसे रह सकता है, यह सोचता हू तो आश्चर्य होता है। हृदय में भयानक ज्वालामुखी छिपाये हुए वे ऊपर से शांत और प्रकृतिस्थ ही दीखते थे। मित्रों में बैठते तो हलकी फुलकी बातें भी करते और खुलकर अट्टहास भी करते। उस समय कौन कल्पना कर सकता था कि यह आदमी भीतर से इतना दुखी और टूटा हुआ है।"[3]

शिक्षा-दीक्षा

दिनकर जी की प्रारम्भिक शिक्षा बड़ी ही कठिनाइयों में हुई। प्रात उठकर पाच छह मील की दूरी पर स्कूल जाना पड़ता था। उन्होंने बाढ़ के सिर पर पैर

---

1 प्रो० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य में जीवन दर्शन, पृ० 19-21
2. डा० रमारानीसिंह—दिनकर: साहित्य में व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति, पृ० 43
3 श्री गोपालराय—समीक्षा, पृ० 8

रखकर और गर्मी मे तप्त बालू मे होकर भी आरम्भिक शिक्षा का क्रम चलाये रखा ।[1] बचपन से ही 'वन्देमातरम्' गाने का शौक था । सन् 1922 मे असहयोग आन्दोलन के कारण पाठशाला बद हो गयी । दिनकर जी को अब राजकीय मिडिल स्कूल मे जाना पडा । सन् 1928 मे मोकाम घाट के एच० ई० स्कूल से मैट्रिक और पटना से इतिहास लेकर बी० ए० उत्तीर्ण की । वे अपनी ओजस्वी वाणी से अपने श्रद्धालु जिज्ञासु ग्रामवासियो के समक्ष 'रामचरितमानस' का सस्वर पाठ करते थे ।[2] सादगी ही उनके जीवन की प्रमुख विशेषता थी, दिनकर जी पौरुष के कवि ही नही, बल्कि स्वय भी पौरुषवान थे । उनके व्यक्तित्व को यदि हम एक शब्द म बद करना चाहे तो वह है 'पौरुष' ।[3] बचपन से ही कविता रचना उनका अभिन्न अग बन गया था । पढने के साथ-साथ वे ओजपूर्ण कार्यक्रमो मे भी बडे उत्साह से भाग लेते थे ।[4] यही सस्कार उनके आगामी जीवन मे फलीभूत हुए ।

सस्कार-शीलता

विद्यार्थी जीवन के सस्कार

दिनकर जी ने प्राथमिक शिक्षा गाव की पाठशाला मे प्राप्त की । प्राथमिक शिक्षा के लिए उन्हे तीन मील दूर बारो नामक ग्राम रोज पैदल जाना पडता था । यहा हिन्दी के साथ उन्होंने उर्दू भी पढी । यही पर दिनकर जी के बाल मन पर राष्ट्रीयता के सस्कार पडे । इसके बाद दिनकर जी ने मोकामा घाट, जो गगा के दूसरे तट पर था, से हाई स्कूल पास किया । रोज गाव से पैदल जाते थे । जूतो का रिवाज नही था । गर्मी की ऋतु मे तेज धूप मे पैदल चलने के कारण उनके पैरो मे छाले पड गये थे । पढाई मे अपनी कक्षा मे वे प्रतिभाशाली और सर्वश्रेष्ठ छात्र थे । इसीलिए दसवी की परीक्षा मे केवल दिनकर जी ही पास हुए । हिन्दी मे सर्वप्रथम स्थान प्राप्त करने के कारण उन्हे 'भूदेव हिन्दी पदक' प्राप्त करने का गौरव प्राप्त हुआ ।[5] होनहार बिरवान के होते चीकने पात' उक्ति दिनकर जी के बाल्यकाल मे चरितार्थ होने लगी । 1932 मे पटना कालेज मे इतिहास ऑनर्स

---

1 कु० पद्मावती—दिनकर व्यक्तित्व एव कृतित्व, पृ० 43
2 डा० रामधारी सिंह दिनकर—चक्रवाल, पृ० 24
3 प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद (स०)—राष्ट्रकवि दिनकर एव उनकी साहित्य साधना, पृ० 24
4 डा० सावित्री सिन्हा—युग चारण दिनकर, पृ० 4
5 डा० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 23

लेकर बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की ।[1] आगे चलकर यही इतिहास उनके संस्कृति और दर्शन विषयक चिन्तन का आधार बना ।[2]

दिनकर के व्यक्तित्व मे उनके मित्रो का बहुत बडा हाथ है । उनमे सभी तरह के मित्र थे । उनके व्यक्तित्व पर श्री जयप्रकाशनारायण, श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, श्री गगाशरण सिंह, श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, मैथिलीशरण गुप्त, सुमित्रानन्दन पत, महादेवी वर्मा, रवीन्द्रनाथ टैगोर, इकबाल, काजी नजरुल इस्लाम तथा विदेशी कवियो जैसे—शैली, वर्ड्सवर्थ, लारेंस, इलियट आदि का भी प्रभाव था। दिनकर इकबाल से तो इतने प्रभावित थे कि उनके सघर्ष के क्षणो को वैसा का वैसा साहित्य म उतार लिया। दिनकर अपनी काव्यालोचना सम्बन्धी पुस्तक 'शुद्ध कविता की खोज' मे लिखते है कि—"जिसे हम व्यक्तित्व कहते है वह सघर्ष की अवस्था है, जब तक वह अवस्था बनी रहती है, तभी तक मनुष्य का व्यक्तित्व कायम रहता है ।'[3]

दिनकर जी म एक अक्खड देहाती के सस्कार भी थे । ये आचार-व्यवहार तथा रीति रिवाज के पालन मे एक ग्रामीण की कट्टरता अपनाते । शादी-ब्याह और यज्ञ प्रयोजन मे ये देहाती परम्परा के कायल रहे । इन कार्यों म क्रातिकारी कदम उठाना इनके लिए असम्भव था । धर्म सम्बन्धी इनकी मान्यताए कितनी ही आधुनिक और बौद्धिक क्यो न हो, उनके व्यावहारिक रूप से समक्ष आते ही ये रूढिवादिता का दामन छोड नही पाते है ।[4] दिनकर जी ने विद्यार्थी जीवन बडी सादगी से व्यतीत किया । वेश भूषा और व्यक्तित्व की कृत्रिम साज सज्जा की ओर उनका ध्यान कभी नही गया । वे सदा साधारण धोती व मोटे कपडे का कुर्ता पहनते और चादर डाले रहते थे । उनके सिर के बाल छोटे किन्तु शिखा लम्बी होती थी । वेशभूषा साधारण होत हुए भी उनके चेहरे पर एक ओज और तेज था । यह ओज और तेज उनके मुखमण्डल पर हमेशा रहा ।[5] दिनकर जी के वाह्य व्यक्तित्व की तेजस्विता आतरिक ऊर्जा का परिणाम थी ।

साहित्यिक एव राष्ट्रीय सस्कार

दिनकर जी कठोर परिश्रमी थे । उनको बचपन मे रामचरितमानस, नाटक,

---

1 मन्मथनाथ गुप्त—रामधारीसिह दिनकर, पृ० 14

2 दिनकर—सस्कृति के चार अध्याय, भूमिका से उद्धृत

3 डा० रमारानी सिह—दिनकर साहित्य म व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति, पृ० 41-42

4 डा० रामधारीसिह दिनकर—चक्रवाल, भूमिका पृ० 29

5. डा० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 24

रामलीला तथा पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से साहित्यिक सस्कार प्राप्त हुए। 1920 मे लोकमान्य तिलक की मृत्यु के सदर्भ मे प्रकाशित 'प्रताप' पत्रिका मे 'एक भारतीय आत्मा' कविता ने दिनकर जी को साहित्यक सस्कारो की ओर प्रेरित किया। वह युग भी राष्ट्रीय आन्दोलन का था। उन्हें राष्ट्रीय कविताए बहुत अधिक रुचिकर लगती थी और वे सभी कविताओ को याद कर लेते थे। इसी से उनमे साहित्यिक सस्कारो के साथ-साथ राष्ट्रीय भावनाए भी जाग्रत हुई।[1]

हिन्दी से उन्हे विशेष प्रेम था क्योकि हिन्दी भाषा के साहित्य की दरिद्रता उनके सामने विद्यमान थी। इस सम्बन्ध मे उन्होने एक घटना का उल्लेख किया है—"मैट्रिक मे हिन्दी मे मैंने विश्वविद्यालय मे प्रथम स्थान प्राप्त किया और 'भूदेव हिन्दी मैडल' प्राप्त किया। पटना कालेज मे आई० ए० मे जब मैंने नाम लिखवाया तो मैंने सोचा हिन्दी ले लू लेकिन प्रिंसीपल हार्न ने मुझे हिन्दी लेने की इजाजत नही दी। आई० ए० पास करने के बाद जब मैं बी० ए० मे पहुचा तो मैंने फिर कोशिश की कि प्रिंसीपल पेपर मे हिन्दी ले लू। इस बार मिस्टर लिबर्ट प्रिंसीपल थे, विपाक्त स्वर मे उन्होने कहा—"भले ही तुम हिन्दी मे सर्व-प्रथम आये हो मगर अग्रेजी मे तो नही। हिन्दी भाषा का साहित्य दरिद्र है, मैं इसे प्रोत्साहन नही दे सकता।"[2] दिनकर जी के लिए ये शब्द प्रेरणा का विषय बने और वे अधिक विश्वास के साथ हिन्दी की सवा म सलग्न हो गये। स्वभाव से दिनकर जी ईमानदार एव स्पष्टवादी थे। प्रथम भेंट मे वे किसी को भी अविश्वसनीय नही मानते थे किन्तु बाद मे धोखा खाने पर अपनी पीडा भी नही छिपाते थे। भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है कि—"कलाकार की हैसियत से दिनकर जी को मैं सबसे अधिक स्पष्ट और ईमानदार पाता हू।"[3] दिनकर जी की स्पष्टवादिता आद्यन्त उनके जीवन और व्यवहार म विद्यमान रही।

दिनकर सामाजिक, सास्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक, आर्थिक सभी प्रकार के पर्यावरण से प्रभावित हुए। इसी अवस्था मे उनके साहित्यिक सस्कारो का जन्म हुआ। दिनकर जी न अपने पारिवारिक उत्तरदायित्वो के कारण साहित्य को माध्यम बनाकर अप्रत्यक्ष रूप से अपने कार्य को सम्पन्न किया। दिनकर की पहली पुस्तक 'बारदोली सत्याग्रह' थी, जो राष्ट्रीयता की भावना से ओतप्रोत है। इसके बाद उनका खण्डकाव्य 'प्रणभग' आया। 1935 मे 'रेणुका' लिखी गई। दिनकरजी

1 दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 24
2 प्रतापचन्द्र जैसवाल (स०)—राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना, पृ० 8
3 आजकल, फरवरी 1960, पृ० 17

का जीवन समय के साथ-साथ बदलता गया। संघर्ष के समय गर्जन एवं शांति के समय रस का अजस्र धारा-प्रवाह दिनकर के साहित्य का मूल आधार बना। जीवन के अन्तिम दिनों में 'उर्वशी' और 'परशुराम की प्रतीक्षा' सभी को त्यागकर ईश्वर की भक्ति में लीन हो गये। इसके बाद 'हारे को हरि नाम' नामक काव्य-संग्रह प्रकाशित हुआ।

दिनकर जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार थे। सम्पूर्ण दिनकर साहित्य को इस प्रकार विभाजित किया जा सकता है—काव्य कृतियां, संस्मरण, आलोचना, यात्रा-विवरणात्मक निबन्ध, सांस्कृतिक निबन्ध और गद्य-काव्य। दिनकर साहित्य में काव्य के दोनों रूपों—प्रबन्ध एवं मुक्तक की रचना हुई। दिनकरजी की लेखनी काव्य की दोनों विधाओं पर समान रूप से गतिशील हुई।[1] विभिन्न कृतियों के अध्ययन-मनन के साथ-साथ दिनकर जी के साहित्यिक संस्कार गहन से गहनतर तथा राष्ट्रीय संस्कार विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों, राजनीतिक सम्मेलनों एवं क्रांतिकारी क्रियाकलापों के प्रभावस्वरूप प्रबल से प्रबलतर होते चले गये।[2]

सरकारी नौकरी में रहते हुए दिनकर जी ने अनेक देशों का भ्रमण किया। इन्हीं यात्राओं का चित्रण उन्होंने अपने संस्मरणात्मक निबन्धों में किया है। दिनकर गद्य की अन्य विधाओं को रचने में जितने सफल हुए हैं, उतने ही संस्मरणात्मक निबन्धों में भी। दिनकर जी ने अपनी डायरी (1974) लिखकर अपने गद्य एवं पद्य साहित्य का समापन किया।

व्यवसाय एवं कार्य क्षेत्र

अर्थाभाव ने दिनकर जी को व्यावसायिक क्षेत्र में प्रवेश करने को बाध्य किया। सन् 1932 में बी० ए० ऑनर्स करने के पश्चात् दिनकर जी पूर्णरूपेण गृहस्थ जीवन में उतर आये। एक स्कूल में प्रधानाध्यापक का पद मिला परन्तु ब्रिटिश सरकार के पक्षपाती जमींदारों से इनका पाला पड़ा। जिसके कारण दिनकर जी को कभी सरकारी नौकरी तो कभी प्राइवेट नौकरी करनी पड़ी। सरकारी नौकरी में प्रवेश करने पर दिनकर जी को स्वामी सहजानन्द सरस्वती ने काफी रोका परन्तु राष्ट्रद्रष्टा, पौरुष के धनी, युगधर्म वेत्ता, युग पुरुष, अलौकिक काव्य प्रतिभा के धनी दिनकर कब रुकने वाले थे? अनेक संघर्षों से जूझते हुए सफलता के पथ पर निरन्तर आगे बढ़ते रहे। एक ओर क्रांति और विद्रोह के उद्घोष उनके कण्ठ से निर्गत होने के लिए मचल उठते थे और दूसरी ओर सर-

1 दिनकर साहित्य में व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति, पृ० 46
2 दिनकर के काव्य में जीवन दर्शन, पृ० 24

कारी नौकरी होने के कारण दमनचक्र मे भी उनको पिसना पडता था। सरकार की दृष्टि मे वे बागी थे, विद्रोही थे। जो भी हो, सरकारी नौकरी की विवशता और गुलामी को झेलते हुए भी दिनकर जी ने राष्ट्रीयता के जिस युगगम्भीर और निर्भीक राग का उद्घोष किया, वह विशेष रूप से स्मरणीय बना।

दिनकर जी भारतीय साहित्य जगत मे एक अभूतपूर्व व्यक्तित्व को धारण किये हुए थे। साहित्य सृजन के अतिरिक्त वे वक्ता, विचारक तथा हिन्दी सेवी के रूप मे हमारे सामने आये। एक हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक होने के बाद उनके जीवन मे कई मोड आये। सन् 1935 मे 'रेणुका' के प्रकाशन के बाद इनकी नियुक्ति बिहार सरकार के अधीन सब रजिस्ट्रार पद पर हुई। नौ वर्ष बाद युद्ध प्रचार के विभाग के उप निर्देशक भी रहे। इसी बीच 1934 से 1947 तक साहित्य के माध्यम से स्वतंत्रता-संग्राम मे महत्त्वपूर्ण योगदान किया। सन् 1950 से 52 तक मुजफ्फरपुर कालेज मे हिन्दी विभागाध्यक्ष भी रहे और कुछ समय पश्चात् सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देकर राज्यसभा के कांग्रेसी सदस्य चुने गये। दिनकर जी ने राज्यसभा से अलग होकर भागलपुर विश्वविद्यालय मे उपकुलपति पद को सुशोभित किया, किन्तु उपकुलपति पद से इस्तीफा दे दिया और सन् 1966 मे गृह मन्त्रालय मे हिन्दी सलाहकार के रूप मे कार्य करने लगे।[1] इसी बीच उनके बडे पुत्र का निधन हो गया जिसका उनके मन पर गहरा प्रभाव पडा। दिनकर जी ने एक तरफ सरकारी, गैर सरकारी कार्य कर देश की सेवा की तो दूसरी तरफ साहित्य-सृजन मे अभूतपूर्व योगदान दिया।

प्रतिष्ठा और सम्मान

दिनकर जी आधुनिक भारतीय साहित्य परम्परा मे राष्ट्रीय भावना के सजग प्रहरी थे। आपने सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और धार्मिक जागृति मे अपूर्व योगदान दिया। समय-समय पर प्राप्त पुरस्कार एव सम्मान उनके आदान की स्वीकृति है। सन् 1953 मे सुकवि दिनकर जी को उनके ग्रंथ 'संस्कृति के चार अध्याय' पर साहित्य अकादमी ने राष्ट्रीय पुरस्कार दिया।[2] सन् 1959 मे उनकी साहित्यिक सेवाओ के उपलक्ष मे राष्ट्रपति ने उन्हे 'पद्मभूषण' की उपाधि से गौरवान्वित किया। 1962 मे भागलपुर विश्वविद्यालय ने उन्हे डॉक्टर आफ लिटरेचर की उपाधि दी। इसके अतिरिक्त 'कुरुक्षेत्र' काव्य-कृति पर इलाहाबाद की साहित्यकार ससद ने एक भव्य समारोह मे दिनकर जी को एक हजार रुपये, उत्तर

---

1. जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी (स०)—दिनकर : व्यक्तित्व एव कृतित्व पृ० 44
2. डा० प्रतिभा जैन—दिनकर : काव्य कला और दर्शन, पृ० 52

प्रदेश सरकार ने बारह सौ रुपये, भारत सरकार ने दो हजार रुपये, काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने द्विवेदी पदक देकर सम्मानित किया। 'रश्मिरथी' कृति पर भी दिनकर जी को द्विवेदी पदक तथा उत्तर प्रदेश सरकार से आठ सौ रुपये का पुरस्कार प्राप्त करने का श्रेय मिला। 1973 मे भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त करके तो वे गौरव और यश के अत्युच्च शिखर पर पहुच गये। हिन्दी विभागाध्यक्ष तथा उपकुलपति के रूप मे उन्होने शैक्षणिक क्षेत्रो मे पर्याप्त ख्याति और लोकप्रियता प्राप्त की। राज्यसभा, राजभाषा आयोग, केन्द्रीय फिल्म सेंसर बोर्ड तथा आकाशवाणी की केन्द्रीय सलाहकार समिति के सम्मानित सदस्य के रूप मे एव केन्द्रीय सरकार के हिन्दी सलाहकार के पद पर कार्य करते हुए उन्होने राजनीतिक और राजकीय क्षेत्रो मे गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त किया।

इतना ही नही, सन् 1955 मे पोलैण्ड, लन्दन, जिनेवा, पेरिस और काहिरा, 1957 मे चीन, हागकाग, बैंकाक और बर्मा, 1961 मे रूस, 1967 मे मारीशस तथा 1968 मे पश्चिम जर्मनी की यात्रा के समय उन्होने सास्कृतिक और साहित्यिक प्रतिनिधित्व किया, उससे राष्ट्र के सास्कृतिक एवं साहित्यिक गौरव गरिमा मे तो वृद्धि हुई ही, साथ ही उन्हें भी विदेशो मे पर्याप्त प्रतिष्ठा और ख्याति अर्जित करने का सौभाग्य मिला।

दिनकर जी की कृतियो का विदेशी और अन्य भारतीय भाषाओ मे भी आदर हुआ है। उनके गद्य-ग्रथ 'संस्कृति के चार अध्याय' का अंगरेजी अनुवाद श्री नरेन्द्र गोयल ने किया है। इस ग्रथ के प्राचीन खण्ड का अनुवाद जापानी भाषा मे भी हुआ है। 'कुरुक्षेत्र' काव्य का अनुवाद कन्नड, तेलुगु आदि मे हुआ और षष्ठ सर्ग का अनुवाद अगरेजी मे रघुवश कपूर ने किया है। श्री प्रतापनारायण करण 'रश्मिरथी' के कुछ अंशो का अनुवाद असमिया मे किया है। 'उर्वशी' की कुछ कविताओ का अनुवाद श्री केशव ने अगरेजी मे किया है। जापान से प्रकाशित होने वाले एक अगरेजी पत्र 'ओरियण्ट वेस्ट' मे 'कलिंग-विजय' का अनुवाद प्रकाशित हुआ। इसके अलावा सगीत निर्देशक श्री जयदेव द्वारा 'उर्वशी' काव्य का जो सगीत तैयार किया गया है वह भी दिनकर जी के कृतित्व और अप्रत्यक्ष रूप से दिनकर जी के प्रति सम्मान का परिचायक है।

जीवन के सघर्ष और वैषम्य

अलौकिक काव्य-प्रतिभा के धनी, ओजस्विता की गौरव-गरिमा से समन्वित, वाणी-रश्मिरथी, काव्य-गगन मे भानु के समान दीप्यमान श्री रामधारीसिंह दिनकर जी का व्यक्तित्व सघर्ष एव विचित्रताओ से परिपूर्ण था। उन्होंने स्वय अपने विषय मे कहा है—"मैं न तो सुख मे जन्मा था, न सुख मे पलकर बढा हू। ……धनाभाव की पीडा, दफ्तरो मे मिलने वाले प्रच्छन्न अपमान, बेटियो के

विवाह की चिन्ताए और पारिवारिक कष्ट मैंने बहुत सहे हैं।" उन्हे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे इतने दु खो और कठिनाइयो का सामना करना पडा कि उन्हे यह जीवन ही दर्द का अजस्र स्रोत प्रतीत हुआ—[1]

> जीवन दर्द का झरना है।
> जो भी जीते हैं दर्द भोगते है।
> और दर्द भोगते भोगते ही
> हम मरना है।[2]

दिनकर जी के वैषम्यो का अवलोकन निम्न शीर्षको के अन्तर्गत किया जा सकता है—

1 व्यावसायिक जीवन के संघर्ष और वैषम्य
2 साहित्यिक जीवन के संघर्ष और प्रतिकूल आलोचनाए
3 पारिवारिक जीवन के संघर्ष
4 शारीरिक कष्ट

व्यावसायिक जीवन के संघर्ष और वैषम्य

शिक्षार्जन के उपरान्त व्यावसायिक जीवन की ओर उन्मुख होते ही उन्हे सामाजिक विषमताओ का कटु अनुभव हुआ। दिनकर जी एक निम्न परिवार से सबंध रखते थे जबकि उन दिनो प्रतियोगी परीक्षाओ के अभाव म बडे पदो पर उच्च वर्ग (धनी परिवार) के युवक नियुक्त होते थे अत दिनकर जी अपनी महत्त्वाकाक्षा को पूर्ण नही कर सके। जब वे राष्ट्रीयता और जन-जागरण के लिए ज्वलत कविताओ के माध्यम से अगरेज शासको के विरुद्ध क्राति विद्रोह ओज और शौर्य की भीषण हुकार करते तो अगरेज सरकार के कान खडे हो जाते। उन्हे तग करने के लिए सरकार ने चार साल की अवधि म उनका बाईस बार स्थानान्तरण किया। उन्हे अनेक व्यक्तियो की निर्मम आलोचनाओ जुगुप्साजनक प्रतिक्रियाओ तथा गहन अन्तर्द्वन्द्व का सामना करना पडा।[3] उससे पीडित होकर वे कह उठे—

> विनय मान मुझको जाने दो,
> शाप गीत छिप कर गाने दो,

---

1 डा० विनोदबाला शर्मा—दिनकर जीवन वृत्त, व्यक्तित्व और कृतित्व, पृ० 26 27
2 दिनकर—हारे को हरिनाम, पृ० 65
3 दिनकर जीवनवृत्त, व्यक्तित्व और कृतित्व, पृ० 28-29

मुझसे तो न सहा जायेगा अब असीम यह कोलाहल
जी न सकूंगा पर झेल अब पी न सकूंगा ग्लानि-गरल।[1]

जीवन की इन्हीं सघर्षपूर्ण एव अन्तर्द्वन्द्वमयी परिस्थितियों में वे मधुमेय जैस दारुण रोग से ग्रस्त हुए। हिन्दी सलाहकार के पद से निवृत्त होने पर तो उनक जीवन मे निराशा एव अवसाद परिव्याप्त था। अपने स्वर्गीय पुत्र के अनाथ परि वार की चिन्ता और आर्थिक कठिनाइयो के कारण प्राय अशांत और उद्विग्न रहने लगे थे।

साहित्यिक जीवन के सघर्ष और प्रतिकूल आलोचनाए

साहित्य का मार्ग सरल, सुगम न होकर कण्टकाकीर्ण होता है। साहित्यिक जीवन मे पदार्पण करने वाले व्यक्ति को अनेक सघर्षों एव प्रतिकूल आलोचनाओ का सामना करना पडता है। दिनकर जी अपने अध्यवसाय और प्रतिभा के बल पर अपने जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियो को तो अपने अनुकूल बनाने म कुछ सफल हुए किन्तु हिन्दी वाङ्मय को अपनी उच्च कोटि की कृतियो से समृद्ध करने पर भी प्रतिकूल आलोचनाओ और आक्षेपो से बच नही सके। जब 'उर्वशी' काव्य प्रकाशित हुआ तो कुछ लोगो ने उसे अनौचित्यपूर्ण बतलाते हुए कहा कि—' इस समय उर्वशी की रचना गद्दारी है।"[2] डा० भगवतशरण उपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'समीक्षा के सदर्भ मे' उर्वशी की कटु आलोचना की है और यह कहा है कि—"आज गर्ज कि हिन्दी उर्वशी सस्कृत 'विक्रमोर्वशीय' का कथानुवाद है।"[3] जब दिनकर जी का गद्य-ग्रथ 'सस्कृति के चार अध्याय' प्रकाशित हुआ तो कुछ कट्टर हिन्दुओ ने इसकी आलोचना की तथा कुछ स्थानो पर उसकी प्रतियो को जलाया गया।[4] मैथिलीशरण गुप्त जैसे घनिष्ठ मित्र और प्रशसक ही उनसे विद्वेषपूर्ण बातें करत उनकी निन्दा और आलोचना करते तो उनके मर्म को आघात पहुचता था। कुछ लोगो ने तो उनके राष्ट्रकवित्व का लेकर मजाक भी उडाया।[5] कुछ व्यक्ति तो उनकी महत्ता पर आक्षेप करने से भी न चूके—

' जन्मजात होत महान कुछ अपने से बनते हैं लोग।
कुछ थोपा जाती है महानता एकमात्र सजोग।

---

1 दिनकर—मुक्ति तिलक, पृ० 16
2 दिनकर—दिनकर की डायरी, पृ० 63, 322
3 डा० भगवतशरण उपाध्याय—समीक्षा के सदर्भ, पृ० 14-10
4 वही
5 दिनकर—दिनकर की डायरी, पृ० 44

कोवे चाल हंस की चलते पर आवाज न छिपती है,
हंसा को क्या, दुनिया भोगे अपने कर्मों का भोग।"[1]

पारिवारिक जीवन का संघर्ष

दिनकर जी को प्रारंभ से ही पारिवारिक संघर्षों से जूझना पड़ा। निम्न मध्यवर्गीय परिवार में उत्पन्न और केवल दो वर्ष की वय में ही पिता की छत्र-छाया से वंचित दिनकर जी आर्थिक अभावों और विभिन्न पारिवारिक समस्याओं में पलकर बड़े हुए और आजीवन इन समस्याओं से दो चार होते रहे। अपना भरा-पूरा परिवार होते हुए भी वे मृत्यु से एक-डेढ़ वर्ष पहले से निःसंग भटकते फिर रहे थे और सन्यास लेने की बात कह रहे थे। अपने पुत्र के असामयिक निधन से तो दिनकर जी बुरी तरह टूट ही गये।[2] इस प्रकार दिनकर जी की नियति का यह क्रूर व्यंग्य था कि जीवन में पर्याप्त सम्मान, यश, पद प्रतिष्ठा तथा धन अर्जित करने के उपरांत भी व पारिवारिक जीवन के विषम संघर्षों में उलझे रहे और अपने जीवन के अंतिम दिन भी सुख-चैन, निश्चितता और निरुद्विग्नता में व्यतीत न कर सके।

शारीरिक कष्ट

जिस व्यक्ति ने आजीवन संघर्ष झेले हों उसका अनेक रोगों से जर्जरित हो जाना कोई आश्चर्यजनक अथवा अप्रत्याशित नहीं है। वे व्यावसायिक साहित्यिक और पारिवारिक जीवन की कठिनाइयों के कारण मधुमेह, रक्तचाप और दिल की बीमरी से ग्रस्त हुए। वे ऐनजाइना के दर्द से भी पीड़ित थे। मृत्यु से कुछ माह पूर्व उन्हें आधे मुंह का पक्षाघात भी हो गया था। वह एक वैद्य महोदय के उपचार से ठीक हो गया। वस्तुतः उनका शरीर कई रोगों के कारण अन्दर ही अन्दर क्षरित होता जा रहा था। उन्हें अपनी मृत्यु का भी पूर्वाभास होने लगा था।[3]

जीवन की लीला का अन्त

प्रतिभासम्पन्न दिनकर जी के बारे में मन्नूलाल जी लिखते हैं—'कवि के रूप में हृदय उच्चोलिनी प्रतिभा में मिश्रित भाव विभोरिनी कल्पनामयी काव्य लहरी के सतर्क, साहित्यिक, विचारक एवं समालोचक के रूप में जल-दुग्ध भेद पारगत

---

1 धर्मयुग, 21 अक्टूबर 1972, प० पद्मकांत मालवीय, पृ०5
2 धर्मयुग, 12 मई, 1974, पृ०2
3 लोकराज, दिनकर अंक, पृ०37

अम्भोजिनी-वन नित्यवासी-विलासी हंस के मूल्य सहज वास्तविकता के उन्मोदक, ससद सदस्य के रूप मे अमोघ, सम्मोहक शक्ति के जाज्वल्यमान भावधारक, सामाजिक के रूप मे सहज सुलभ आस्वादमयी वाक्‌चातुरी के प्रणेता इत्यादि रूप मे दिनकर जी बहुमुखी व्यक्तित्व वाले महामानव थे।"[1] दिनकर जी जिस अप्रत्याशित और आकस्मिक रूप से दिवगत हुए, उसकी कल्पना किसी को भी नही थी। दिनकर जी की अतिम इच्छा तिरुपति जाने की थी। मृत्यु वाले दिन वे अति प्रसन्न और स्वस्थ लग रहे थे। दिनकर जी की इच्छा पूर्ण हुई और 1974 की 24 अप्रैल को अस्पताल मे ही दिल का दौरा पडने से उनकी मृत्यु हो गयी। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनके निधन के विषय मे ठीक ही कहा था—"हिन्दी भाषा उन्हे पाकर धन्य हुई थी, खोकर शोचनीय हो गई।"[2] वस्तुत दिनकर जी का जीवन एक ओर यश एव प्रतिष्ठा की उज्ज्वल गाथा है, दूसरी ओर सघर्षों एव विपत्तियो की करुण कहानी रहा है। इसी सघर्ष ने उन्हे महान् बनाया।

साहित्यिक जीवन के प्रेरक

साहित्य समाज का दर्पण है। समाज का वातावरण एव परिस्थितिया ही कलाकार को प्रेरित एव उत्साहित करती है। कवि या गद्यकार अतीत का वेत्ता, भविष्य का द्रष्टा और वर्तमान का सजग प्रहरी है। इतिहास की गतिविधियो से उनको प्रेरणा तो मिलती है, पर अतीत के प्रति ऐसा मोह नही जगता जो उन्हें वर्तमान के अनुभवो के सबध मे कुछ बाधा पहुचाये। वर्तमान भी उनके लिए उतना ही प्रेरणादायक है जितना अतीत। अतीत तो वस्तुत उनके लिए वर्तमान को समझने की दृष्टिमात्र है। वर्तमान का यह आग्रह और उसके साथ कवि का विचार तथा भावमिश्रित तादात्म्य उसके व्यक्तित्व को अन्य राष्ट्रीय कवियो के व्यक्तित्व से पृथक् कर देता है।[3] दिनकर जी पर तुलसी और कबीर का प्रभाव भी था। उनके सस्कार तुलसी और कबीर की सहज गम्भीरता तथा प्रसाद के गुण आदि थे।[4] 'मानस' का प्रभाव उन पर बचपन मे ही था। उन्ही के शब्दो मे—"जहा तक कविता का सबध है, मैंने प्रेमपूर्वक पहलेपहल तुलसीकृत रामायण पढी थी।"[5] दिनकर जी की कविता मे सामाजिक वैषम्य, आर्थिक शोषण, राजनीतिक हलचल सर्वत्र सुनायी देती है। वे स्वय स्वीकारते है—"मेरी कविताओ के भीतर

---

1 मन्नूलाल द्विवेदी (स)—अलौकिक काव्य प्रतिभा के धनी दिनकर, पृ० 73
2 सोकराज, दिनकर अक, प० प
3 व्यक्तित्व एव कृतित्व कवि दिनकर, पृ० 48
4 डा० सावित्री सिन्हा—युगचारण दिनकर, पृ० 19
5 दिनकर—चक्रवाल, भूमिका पृ० 24

जो अनुभूतिया उतरी वे विशाल भारतीय जनता की अनुभूति थी।"[1] दिनकर जी पर पूर्ववर्ती एव समकालीन रचनाकारो की प्रेरणा स्पष्ट दिखाई देती है। वे एक ओर क्रांतिकारी कवियो के प्रतिनिधियो के रूप मे हमारे सामने आते है तो दूसरी ओर समीक्षक के रूप मे। काव्य-सृजन के बारे मे उन्होने लिखा—"सस्कारो से मैं कला के सामाजिक पक्ष का प्रेमी अवश्य बन गया था किन्तु मन मेरा भी चाहता था कि गर्जन-तर्जन से दूर रहू और केवल ऐसी ही कविताए लिखू जिसमे कोमलता और कल्पना का उभार हो।"[2] दिनकर जी को काशीप्रसाद जायसवाल, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, मैथिलीशरण गुप्त, हरिवशराय बच्चन, महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पत, भारतेन्दु, रामनरेश त्रिपाठी, सुभद्राकुमारी चौहान, माखनलाल चतुर्वेदी से भी साहित्य-सृजन की प्रेरणा मिली। उन्हे अगरेजी कवियो मे शैले, वर्ड्सवर्थ तथा भारतीय कवियो मे रवीन्द्रनाथ तथा इकबाल से प्रेरणा मिली। एतदर्थ दिनकर का मत उल्लेख्य है कि—"मैं यह निवेदन कर देना चाहता हू कि वर्तमान कविता की क्रमबद्ध आलोचना करना मेरा उद्देश्य नही था। कुछ निबन्ध तो मैंने भाषणादि की विवशता के कारण लिखे और कुछ इस लिए कि कविता के जिस रूप से मैं आसक्त रहा हू उसके सबध की निजी धारणाओ को मै सुस्पष्टता के साथ जान सकू।[3] कविता लिखने की प्रेरणा का प्रथम चरण था—रामलीला और नाटक 'छात्र सहोदर' नामक पत्रिका पढने से काफी लाभ हुआ। वे लिखते भी है—"मैं हर महीने इस पत्र की राह बडी आतुरता से देखता और महीने का अक निकलते ही उसमे प्रकाशित सब पद्यो को चाट जाता।" प्रताप मे छपी 'तिलक' शीर्षक कविता के बारे मे दिनकर जी का कहना है कि—"मुझे भली भाति याद है कि वह कविता मुझे अत्यन्त पसन्द आयी थी और मैंने उसे कण्ठस्थ कर बहुत लोगो को सुनाया भी था। आगे चलकर मेरी मनोदशा के निर्माण मे इस तथा भारतीय आत्मा की अन्य कविताओ ने बहुत प्रभाव डाला।"[4] आर्य समाज के प्रवर्तक दयानद का भी प्रभाव दिनकर जी पर दृष्टिगोचर होता है। एक स्थान पर वे लिखते है कि—"जिस प्रकार मैं हिमालय और हिन्दमहासागर का ऋणी हू उसी प्रकार रवीन्द्र, इकबाल और दूसरे कवियो का ऋण भी मुझ पर है।"[5]

राजनैतिक क्षेत्र मे नेहरू जी, डा० राजेन्द्रप्रसाद, डा० राधाकृष्णनन, जय

1 दिनकर—चक्रवाल, भूमिका पृ० 43
2 चक्रवाल भूमिका, पृ० 33
3 दिनकर—मिट्टी की ओर, आत्मनिवेदन से उद्धृत
4 वही
5 दिनकर—रेणुका की भूमिका से उद्धृत

प्रकाश नारायण आदि का सहयोग भी मिला। अहिन्दी भाषी साहित्यकारों में दिनकर से निकटता का सबध था, श्रीमती पद्मा सचदेवा से। दिनकर पद्मा जी को अपनी पुत्री सदृश मानते थे। पद्मा जी डोगरी लोकगीतो व कविताओं की रचयिता है। दिनकर पद्मा जी की कविताओ को पढ़कर आवेशपूर्ण हो गये। पद्माजी दिनकर के इतने निकट थी कि दिनकर ने अपने जीवन मे अतिम पत्र भी पद्मा जी को ही लिखा था।[1] यद्यपि वे गाधी के अहिंसावाद के विरोधी थे तथापि उनके समन्वयवादी दृष्टिकोण से प्रभावित भी थे। कार्ल मार्क्स का प्रभाव भी दिनकर पर प्रत्यक्षत देखने को मिलता है। क्रूर शासको के विरोध मे क्रांति की स्वीकृति कार्ल मार्क्स ने दी।

व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य

दिनकर जी के व्यक्तित्व को दो आधारो पर देखा जा सकता है—

(क) व्यक्तित्व का बाह्य पक्ष

(ख) व्यक्तित्व का आन्तरिक पक्ष।

(क) व्यक्तित्व का बाह्य पक्ष

पाच फुट ग्यारह इंच लम्बा कद, भारी-भरकम शरीर जो बढती हुई वय के साथ-साथ कुछ शिथिल होता जा रहा था, रक्तिम सौन्दर्य से युक्त उज्ज्वल गौर-वर्ण,आत्मविश्वास की दृढता,स्वाभिमान के दर्प, पुरुष के तेज और प्रभुत्व कीआभा से प्रदीप्त मुखमण्डल, गर्वोन्नत ललाट, अनुभूति की स्निग्धता, गम्भीरता और चिन्तन की क्लिष्टता से युक्त भावो मे डूबी हुई सी बडी-बडी स्वप्निल आखो, सुन्दर नासिका, दातो के बीच मे निश्छल प्रकृति की व्यजक जगह, प्रलम्ब बाहु, लम्बी और पतली उगलिया, सिंह की सी गति तथा प्रगल्भ एव ओजस्वी वाणी से समन्वित दिनकर जी का तजस्वी और प्रभविष्णु व्यक्तित्व प्रथम दर्शन मे ही व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता था।[2] दिनकर के उन्नत ललाट को देख कर सहज ही मन आकर्षित हो उठता है। हिन्दी काव्य जगत का परशुराम भी हमारे सम्मुख अकित हो उठता है।[3] खादी का साफ-सुथरा सफेद लम्बा कुर्ता और धोती, कण्ठ मे जरी की किनारी का उत्तरीय, शीत ऋतु मे अचकन के वर्ण का ही मफलर और हाथ मे छडी उनकी वेशभूषा विषयक सुरुचि का परिचय देते थे।

---

1 डा० रमारानी सिंह—दिनकर साहित्य मे व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति, पृ० 55

2 डा० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 35

3 डा० शिखरचद जैन—राष्ट्रीय कवि दिनकर और उनकी काव्य कला, पृ० 50

विशिष्ट वेश-भूषा के कारण उनका व्यक्तित्व और भी आकर्षक हो जाता था तथा अपरिचित व्यक्तियो को उनके नेता अथवा उद्योगपति होने का भ्रम हो जाया करता था।[1] एक रमणाश्रम मे एक अंगरेज साधक श्री आस्वर्न ने विस्मित स्वर मे दिनकर जी से पूछा, "आप ही हिन्दी के कवि दिनकर है ? यहा आश्रम मे आपका नाम सुना था। मगर अब तक मैं यही समझ रहा था कि आप उद्योगपति हैं।"[2] दिनकर का बाह्य व्यक्तित्व भी उनके अह का द्योतक था। श्रीमती पद्मा सचदेवा के शब्दो मे—"उनका व्यक्तित्व हिमालय के सदृश उन्नत व समुद्र के समान गुरु गम्भीर और विशाल था। उनके सम्मुख हम सभी अपने आपको बहुत छोटा महसूस किया करते थे। जब वे बोलते थे तो ऐसा लगता था कि चारो दिशाए काप रही हैं। श्रीमती सावित्री सिन्हा के शब्दो मे " उनके बाह्य व्यक्तित्व मे भी क्षत्रिय का तेज ब्राह्मण का अह, परशुराम का गर्जन और कालिदास की कलात्मकता है।"[3]

दिनचर्या

दिनकर की दिनचर्या पर पूर्णरूपेण प्रकाश उनकी पुस्तक 'कोयला और कवित्व' से सगृहीत कविता 'दिनचर्या' से पडता है। अपने शारीरिक कष्टो का विवरण कितनी चतुराई से अल्पाहार का वर्णन करते समय किया है— 'मधुमेही हू, चना चबाकर चाय पीता हू तभी मिलने वाला का अटूट पारावार परतु सभी स्वार्थान्ध। यह दिनकर को प्रिय नही, परतु जिस पद पर वे आसीन हैं, वहा यही खोखलापन है, अपना कोई नही। दिन म डाक का समय व सध्या मे साहित्य-सलाप, रात्रि के स्तब्ध वातावरण मे चिन्तन-मनन, रात रात भर ध्यान-मग्न नि - शब्द जगा रहता हू।"[4] दिनकर जी की साहित्य व राजनीति दोनो मे रुचि होने के कारण उनकी दिनचर्या निश्चित नही थी।

रचना-प्रक्रिया

दिनकर जी की विशिष्टता थी—एक भाव, एक सवेग जिसके कारण उन्होंने इतने विशाल साहित्य का सृजन किया। दिनकर की अधिकाश रचनाए क्रोध के का ही परिणाम है। "जब वह पत्नी, पुत्र अथवा परिवार के किसी अन्य व्यक्ति या किसी मित्र पर नाराज होते हैं तब दरवाजा बद कर खूब देर तक लिखते

---

1 दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 35

2. दिनकर की डायरी, पृ० 98

3 युगचारण दिनकर, पृ० 22

4 दिनकर—कोयला और कवित्व, पृ० 39

है।"[1] दिनकर मे धीरता का अभाव था। इसी अधीरता का परिणाम है—'नई दिल्ली व हिमालय'[2] जिनके कारण दिनकर यश के भागीदार बने। दिनकर का मन कुठाग्रस्त भी था क्योकि समाज ने उन्हे राष्ट्रकवि, क्राति व ओज का कवि माना था।[3] वस्तुत उनका रचनाधर्मी वैशिष्ट्य ही उनके सृजन का सार्थक्य है।

व्यसन और रुचिया

दिनकर जी को तम्बाकू, खैनी का शौक था। लेकिन 1973 मे डाक्टरो के परामर्श पर खैनी व तम्बाकू छोडना पडा। दिनकर जी शराब का सेवन कभी नहीं करते थे। मास-मछली भी डाक्टर के कहने पर शुरू किया था। दिनकर जी की रुचि अत्यधिक अध्ययन मे रही है। इसी का परिणाम है विशद् साहित्य। दिनकर की कला मे भी रुचि रही है। दिनकर लिखते है कि—"शार्पिग करने मे मुझे आनन्द मिलता है, मगर शार्पिग छोटी चीजो की करता हू।"[4] दिनकर ने पारिवारिक विसगतियो के मध्य अपना जीवन व्यतीत किया परन्तु इनमे से कुछ विसगतिया भी उनकी रुचि का विषय रही—"प्रत्येक कन्या के लिए वर ठीक करना, वर-वधू के लिए साज-सामान जुटाना और अपनी जेब से जी खोलकर बिवाह मे खर्च करना। यह सब घर गृहस्थी के मामले मे उनका प्रिय धधा था।"[5] दिनकर जी को रसगुल्ला और जलेबी खाने मे भी रुचि थी। दिनकर का आत्मविश्वास, अह, निर्भीकता, स्पष्टवादिता, सामाजिकता, निस्वार्थी स्वरूप उनके साहित्य मे स्थान-स्थान पर द्रष्टव्य है। अह कितना ठोस है, तभी तो वे कहते है—"तू जो इस हथौडे से चट्टान या पत्थर तोडेगा और तेरे तोडे हुए अनपढ पत्थर भी काल मे समुद्र मे फूल समान तैरेंगे।"[6]

व्यक्तित्व का अतरग पक्ष

श्री कान्तिमोहन शर्मा के शब्दो मे—"उनका व्यक्तिपक्ष जितना ही कोमल और भावुक है, उनका सामाजिक पक्ष उतना ही प्रबल, आग्रहशील एव नियामक और इन्ही दोनो पक्षो के द्वन्द्व का इतिहास उनके कवि के विकास को समझने के

---

1. युगचारण दिनकर, पृ० 27
2. वही
3. दिनकर साहित्य मे व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति, पृ० 59
4. दिनकर की डायरी, पृ० 204
5. समीक्षा, दिनकर स्तुति अक, पृ० 8
6. जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी (स०)—दिनकर : व्यक्तित्व और कृतित्व, पृ० 102

लिए अमूल्य सहायक है।[1] दिनकर जी की अन्तरगता के विविध सदर्भ उनकी लोकप्रियता मे द्रष्टव्य है।

राष्ट्रीयता

दिनकर जी एक महान् राष्ट्र भावनावादी कवि थे, जिनकी वाणी की गूज आज भी विद्यमान है। दिनकर जी की राष्ट्रीयता के तीन रूप दृष्टिगोचर होते है। प्रथम अतीत गौरवमान, द्वितीय बर्तमान की कारुणिक स्थिति और तृतीय उसके निदान के लिए आतकवाद का सहारा।[2] वे अत्यधिक उग्र विचारो के राष्ट्रकवि थे, साथ ही साथ भारतीय स्वतत्रता के समर्थक कवि भी। उनका कहना था—"राष्ट्रीयता मेरे व्यक्तित्व के भीतर से नही जन्मी उसने बाहर से आकर मुझे आक्रान्त किया है।"[3] दिनकर जी जन-जागरण चाहते थे, इसी कारण वे विद्रोही और क्रातिकारी कवि बने। स्वभाव से ही वे भावुक और कल्पनाशील थे परन्तु वातावरण तथा सस्कार ने राष्ट्रीयता के बीज बो दिये। मिश्र जी का कहना है कि, "राष्ट्रीयता उनकी आत्मा का प्रधान स्वर बन गया।[4] युद्ध और राष्ट्रीयता की समस्या पर भी उनका विचार है कि—"युद्ध और राष्ट्रीयता दोनो मे राजनीति है राजनीति जब तक सफेद लिबास मे होती है, उसे हम शांति कहते है, जब उसके कपडे लाल हो जाते है, तब वह युद्ध कहलाती है।"[5]

ओजस्विता से पूर्ण

ओजस्विता का परिचय हमे उनकी समस्त रचनाओ मे मिलता है। गौर वर्ण, उन्नत भाल, तेजपूर्ण नेत्र और ऊचे कद को धारण करने वाले दिनकर जी ओज एव तेज के धनी थे। विद्यार्थी जीवन का चित्राकन करती हुई डॉ० सावित्री सिन्हा लिखती हैं—"लखनऊ के सलोने विद्यार्थियो के बीच उनका दृढ पौरुष और ओजपूर्ण व्यक्तित्व अलग ही दिखाई दे रहा था।"[6] ओज के धनी दिनकर जी बचपन से ही घोर विरोधो से जूझते हुए अत मे उन्नति के चरम बिन्दु पर जा पहुचे। सन् 1959 मे उन्होने राष्ट्रपति से पद्मभूषण की उपाधि प्राप्त की।

1 कातिमोहन शर्मा—कुरुक्षेत्र मीमासा, पृ० 27
2 भगवती चरण वर्मा—आज के लोकप्रिय कवि रामाधारी सिंह दिनकर, पृ० 15
3 चक्रवाल, भूमिका, पृ 33
4 लक्ष्मीनारायण सुधाशु—दिनकर, पृ० 89
5 दिनकर—शुद्ध कविता की खोज, पृ० 219
6 युगचारण दिनकर, पृ० 23

1953 मे साहित्य अकादमी द्वारा राष्ट्रीय पुरस्कार से वे सम्मानित हुए। इसी क्रम मे उन्हें समय-समय पर अन्यान्य सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए।

कल्पनाशील

कवि हमेशा कल्पनाशील होता है। दिनकर जी ने भी छायावादी कवियों की भाति कल्पना लोक का भ्रमण किया। जैसे—ज्योत्स्ना नक्षत्र, तितली, विहगी मलयानिल, निर्झरिणी, स्वर्ण-विहान आदि दिनकर जी के निबधो पर भी इसका प्रभाव यथास्थान देखा जा सकता है।

नारी भावना

जो पुरुष बाह्य रूप मे पुरुषोचित विशेषताओ का जितना धनी होता है उसका अन्तर्मन स्त्री के भावो से उतना ही अधिक घनीभूत हो जाता है। दिनकर की यही विशिष्टता है। वे बाहर से जितना कठोर है अदर से उतने ही अधिक स्त्रीत्व भाव लिये हुए है। उन्होने अपने इसी व्यक्तित्व की पूर्ण निदर्शना 'अर्द्ध नारीश्वर' नामक निबधो मे की है। दिनकर प्रेयसी को प्रेरणा शक्ति, अभिलाषाओ की प्यास व सपनो की साकार प्रतिमा मानते है। नर-नारी विषयक यही भाव उनकी पुस्तक 'उजली आग' मे द्रष्टव्य है—

"विस्मृति के जिस सुधा सिन्धु मे तुम्हे कविता और दर्शन पहुचाते हैं, वहा मैं नारी के प्रेम की नाव पर चढकर गया हू।"

"नारी जब मुस्कराती है तब स्वर्ग का दरवाजा खुल जाता है।"

"नारी जब बाहु बढाती है, तब दृश्य और अदृश्य के बीच सेतु बन जाता है।"[1]

कमलारत्नम् के शब्दो मे—"दिनकर नारी को न देवी समझते हैं न भोग्या उसे वे मनुष्य समझते है, और सतुलित मनुष्य वही है जिसम बुद्धि और भावना पौरुषता और मृदुता, नर और नारी के वैशिष्ट्य, एक-दूसरे के उत्कर्ष करते हो।"[2]

राष्ट्रभाषा प्रेम

दिनकर जी को विद्यार्थी जीवन से ही हिन्दी से प्रेम था। आगे चलकर राष्ट्र प्रेम से राष्ट्र चेता बन गये। उन्होने आजीवन राष्ट्रभाषा की उन्नति के लिए सघर्ष किया तथा सवैधानिक स्तर पर भी अपना रचनात्मक कार्य किया। वे राष्ट्रभाषा

1 दिनकर—उजली आग, पृ० 23

2 कौल एव शास्त्री (स)—दिनकर : सृष्टि और दृष्टि, पृ० 111

सबधी आदोलनो मे स्वय सक्रिय कार्यकर्त्ता रहे तथा समय समय पर विचारोत्तेजक लेख भी लिखे।

क्रान्तिमन्तता

दिनकर जी शोषण, पूजीवाद, भ्रष्टाचार आदि कुरीतियो के भयकर विरोधी थे और इन्ही असमानताओ ने उनके हृदय मे विद्रोह तथा क्राति के बीज बो दिये एव वे यथार्थ द्रष्टा बनकर हमारे सामने आये। यथा—

"रह-रह पखहीन खग सा मैं गिर पडता भू की हलचल म
क्षटिका एक बहा ले जाती स्वप्न राज्य आसू के जल मे।"[1]

युग-धर्म चेता

जब भारत परतन्त्रता की बेडियो मे जकडा हुआ था उस समय जनजीवन सामाजिक विभीषिका, धार्मिक रूढिचक्र, आर्थिक उत्पीडन और शोषण के शिकजे मे छटपटा रहा था। छायावादी कपोल-कल्पित रचनाओ मे लिप्त थे, तब दिनकर जी ने युग को चेताने के लिए 'कर्म बीच धर्म' का सदेश दिया तथा राष्ट्रीय जागरण की दुन्दुभि बजायी। इनका काव्य 'परशुराम की प्रतीक्षा' युगो-युगो तक हमारा पथ आलोकित करता रहेगा। श्री भगवतीचरण वर्मा ने लिखा है—'दिनकर हमारे युग के यदि एक मात्र नही तो सबसे अधिक प्रतिनिधि कवि है।'[2]

भारतीय संस्कृति के प्रति अनन्य अनुराग

प्रत्येक देशवासी अपने देश की सस्कृति से श्रद्धा समन्वित प्रेम अवश्य करता है। दिनकर जी भारतीय सस्कृति के प्रति अगाध प्रेम रखते थे। हमारी यह सस्कृति है कि प्रवासी जन भी भारतीय सभ्यता एव सस्कारो से जुडा ही रहता है। यथा—

"एतद्देश प्रसूतस्य सकाशदग्रजन्मन ।
स्वं स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा ॥ मनु० 2 । 20॥

दिनकर जी भी 'सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामया' का पाठ जानते थे।[3] 'सस्कृति के चार अध्याय' ग्रथ उनके सस्कृति प्रेम का ज्वलत प्रमाण है।

---

1 दिनकर—हुकार, पृ० 29

2 भगवती चरण वर्मा—आज के लोकप्रिय कवि रामाधारी सिंह दिनकर, पृ० 15

3 आचार्य डा० सुरेन्द्रदेव शास्त्री (स०)—राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना, पृ० 63

अध्यनशील

दिनकर जी अध्यनशील थे। हिन्दी साहित्य के अतिरिक्त उन्होंने बंगला में श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, काजी नजरूल इस्लाम और श्री सत्येन्द्रनाथ दत्त के काव्य तथा उर्दू में मर इकबाल के काव्य 'बांगेदरा बाले जिबरईल', 'जरबेवलीन' तथा जोश मलीहाबादी के काव्य का पर्याप्त अध्ययन किया था। संस्कृत में कालिदास और भवभूति उन्हे विशेष प्रिय थे। इलियट की कविताओ तथा बर्ट्रेंड रसल और नीत्शे के दर्शन का उन पर व्यापक प्रभाव पड़ा था। फ्रास के बादलेयर, रू और मेलार्मे के काव्य का भी उन्हे पर्याप्त ज्ञान था। इसके अतिरिक्त यीट्स, कीट्स, रिल्के, डी० एच० लारेन्स, गुमिलेव और पेशन तथा कुछ चीनी कवियों के काव्य का भी उन्होने अध्ययन किया था।

व्यक्तित्व का रसात्मक पक्ष

दिनकर का कर्मकाण्डी व्यक्तित्व भी रूखा नही था, अपितु उसमे रस का प्रकीर्ण सागर था, जिसकी रसधार 'रसवन्ती' मे प्रभावित हुई। दिनकर जहा कर्म को श्रेष्ठ मानते हैं वहा वे प्रवृत्तियो से दूर जाने की बात न कर रसास्वादन की अनुमति देते व लेते है। उनका भीष्म जैसा पात्र भी रूप, रस, स्पर्श, रसना व दृग आदि को ग्राह्य मानता है।[1] इसी कारण दिनकर ने लिखा है—"'सुयश तो मुझे हुंकार मे ही मिला किन्तु आत्मा तो मेरी 'रसवन्ती' म बसती है।"[2] 'रसवन्ती' व 'उर्वशी' मे श्रृंगार की अनुपम सरिताए हैं, जो पाठक को स्वय में स्नान कराये बिना नही छोड़ती। रस की प्रधानता ही दिनकर का मूल कवि है। दिनकर जी की रसात्मक वृत्ति का चरमोत्कर्ष 'उर्वशी' नाट्य प्रबध काव्य मे द्रष्टव्य है, जहा कामाध्यात्म का रूपक 'रसवती' भूमिका पर उजागर हुआ है।

कृतित्व-परिचय

दिनकर जी ने जीवन म साहित्य की प्राय सभी प्रमुख विधाओ पर लेखनी चलाई है। ये कवि के साथ आलोचक, निबधकार, कहानीकार भी हैं। इन्होंने प्रबध काव्य, मुक्तक, समीक्षात्मक निबध, कहानी, बाल-साहित्य के माध्यम से अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। दिनकर जी की अब तक प्रकाशित कृतियां हैं—

---

1 दिनकर के काव्य मे जीवन दर्शन, पृ० 41
2 दिनकर—कुरुक्षेत्र, पृ० 113

1	प्रबंध काव्य	—4
2.	मुक्तक कविताओ का सग्रह ग्रथ	—20
3	समीक्षात्मक निबध सग्रह	—5
4	निबध सग्रह	—11
5	सस्कृत से सम्बद्ध कृतिया	
6	कहानी	—1
7	बाल साहित्य	—5
8	सस्मरण साहित्य	—2
9	यात्रा विवरणात्मक साहित्य	—2
10	विविध	—7

प्रबध काव्य

रण भंग

यह खण्ड काव्य है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन सन् 1929 ई० मे हुआ किन्तु आज यह अप्राप्य है।

कुरुक्षेत्र (1946 ई०)

'कुरुक्षेत्र' आधुनिक युग की गीता है, जिसकी रचना द्वितीय महायुद्ध के समय हुई। यह सात सर्गों मे विभाजित है। इस कृति मे दिनकर जी ने बताया है कि सन्यास कापुरुषता है। गीता के अनरूप ही 'कुरुक्षेत्र मे भी अधिकार के लिए लड़ना उचित बताया। 'कुरुक्षेत्र' की रचना मे तत्कालीन परिस्थितिया प्रतिफलित हो रही हैं। इसकी पृष्ठभूमि अन्तर्राष्ट्रीय धरातल पर द्वितीय महायुद्ध है और राष्ट्रीय धरातल पर स्वतत्रता आन्दोलन के लिए हिंसा अथवा अहिंसा की वरेण्यता का प्रश्न है।[1] कुल मिलाकर 'कुरुक्षेत्र' मे दिनकर की दृष्टि विभ्रान्त और स्पष्ट हो गयी है। समष्टिमूलक और वैयक्तिक दोनो ही दृष्टिकोणों में कहीं अस्वस्थता मूलक तत्त्वो के निराकरण और कहो विरोधी तत्त्वो के सामजस्य के द्वारा वे स्थायी निष्कर्षों पर पहुच गये है।[2]

रश्मिरथी (1952)

प्रबधत्व की दृष्टि से 'रश्मिरथी' 'कुरुक्षेत्र' की अपेक्षा अधिक पुष्ट एव

1 (डा० जगदीश प्रसाद के लेख मे उद्धृत) राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना, पृ० 98

2. युगचारण दिनकर, पृ० 138

सशक्त है । इसमे महारथी कर्ण का प्रभावशाली, महत्त्वपूर्ण चरित्राकन है । जिस कर्ण-धर्म के प्रसार का सदेश प्रस्तुत काव्य से माध्यम से प्रसारित किया गया है वह हमारे युग जीवन एव समाज की वर्तमान प रिस्थितियों मे सर्वथा वाछनीय है।[1] डा० सावित्री सिन्हा ने भी कर्ण के चरित्राकन की भूरि-भूरि प्रशसा की ।

उर्वशी (1961)

इसके कथ्य सूत्र वेद, पुराण, महाभारत और भागवत आदि मे मिलते है। 'उर्वशी' मूलत नारी और नर के रागात्मक सबधो का विवेचक काव्य है 'उर्वशी' मे पुरुरवा और उर्वशी के प्रेम के माध्यम से शृगार के अन्य रूपो के साथ साथ उसके आध्यात्मिक पक्ष का चित्रण है ।[3]

मुक्तक काव्य

बारदोली विजय

यह एक मुक्तक कविताओ का सग्रह है ।

रेणुका (1935)

उस समय भारत पराधीन था । 'रेणुका' मे क्राति का जो स्वर मिलता है उसमे वीर भगतसिह के शिष्यो का श्रद्धा भाव सन्निहित है । 'रेणुका' तीन खण्डो मे विभाजित है। इसम एक ओर राष्ट्रीय भावना प्रधान है तो दूसरी ओर नारी और शृगार वर्णन है । जहा तक सौदर्य चेतना का प्रश्न है दिनकर लौकिक प्रति पाद्यो को छोडकर परियो के देश मे पहुच गये हैं।[4] जिससे रहस्यात्मकता की झलक भी मिलती है ।

हुकार (1939)

ओज, शौर्य, वीरता, उत्साह तथा विद्रोही भावनाओ से ओत-प्रोत तथा मूलत राष्ट्रीय चेतना ही 'हुकार' की कविताओ का मूल स्वर है । 'हुकार' मे इ क्राति की देवी और युग के देवता की पूजा के गीत है।[5] इस 'हुकार' का जन्म उस

1 डा० देवीप्रसाद गुप्त—हिंदी महाकाव्य : सिद्धात और मूल्याकन, पृ० 430
2. डा० देवीप्रसाद गुप्त—स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी महाकाव्य, पृ० 227
3 डा० विनोदबाला शर्मा—दिनकर के काव्य म जीवन दर्शन, पृ० 45
4 दिनकर—रेणुका, 'विधवा' कविता मे उद्धृत, पृ० 98
5 प्रो० मुरलीधर श्रीवास्तव—युगकवि दिनकर, पृ० 93

हृदय की गहरी व्यथा से हुआ है। उसी व्यथा से जो वैशाली के भग्नावशेष, मिथिला के भिखारी वेश, चित्तौर का ज्वाल-वसन्त और कलियों का अंत देखकर सिसकी भर भर कर सिहर उठी थी।[1] उस समय की राजनीतिक दासता जन-जीवन के शोषण का नग्न चित्र देखकर क्रांति का स्वरूप हुंकार में स्पष्ट होता है।

रसवती (1940)

'रसवती' एक भिन्न रस की कृति है। जिसका पूर्ण परिपाक 'उर्वशी' काव्य में हुआ है। इसमें संगृहीत कविताएं प्रेम एवं शृंगार की अनुभूतियों को लेकर लिखी गयी है। दिनकर जी ने इसमें प्रकृति का भी सुन्दर चित्रण किया है।

द्वन्द्वगीत (1940)

'द्वन्द्वगीत रुबाई अथवा चतुष्पदी शैली में लिखा गया मुक्तक काव्य है।[2] द्वन्द्वगीत में अध्यात्म भावना और व्यष्टि-समिष्ट के द्वन्द्वों की प्रधानता है। इसमें दिनकर जी ने ब्रह्म, जीव, जगत, मृत्यु आदि पर विचार किया है।

सामधेनी (1947)

'सामधेनी ऋग्वेद की उन ऋचाओं को कहा जाता है, जिनके पढ़ने से यज्ञाग्नि प्रज्वलित हो जाती थी। दिनकर जी के स्फुट कविता संग्रह 'सामधेनी' में भी प्रमुख रूप से वे कविताएं संगृहीत है, जिनकी रचना कवि ने स्वातन्त्र्य यज्ञ की अग्नि को उद्दीप्त करने के लिए की थी जैसे—तिमिर में स्वर वाले दीप आज फिर आता है कोई, 'आग की भीख' आदि।[3]

बापू (1947)

इस कृति में बापू ने अपनी सत्य एवं अहिंसात्मक नीति के द्वारा विदेश नीति को परास्त किया, परतन्त्रता की कड़ियां तोड़ी। ऐसे तेजस्वी प्रतिभासम्पन्न, पावन चरित्र बापू को अपनी वाणी का सहारा लेकर श्रद्धांजलियां अर्पित की, उनका यशोगान गाकर अपने को धन्य माना।

इतिहास के आंसू (1951)

यह कवि की दस ऐतिहासिक कविताओं का संग्रह है।

---

1 प्रो॰ सुधीन्द्र—हिन्दी कविता का क्रान्ति युग, पृ॰ 304
2 दिनकर के काव्य में जीवन दर्शन, पृ॰ 47
3 वही, पृ॰ 48

धूप और धुआ (1951)

इस सग्रह की समस्त कविताए स्वतत्रता, राष्ट्रहित, राष्ट्रपिता एव बलिदानी वीरो के प्रति श्रद्धाजलि तथा वीर भावना आदि विषयो से सबधित है।

दिल्ली (1954)

इसमे कवि की दिल्ली के प्रति समय-समय पर लिखित चार कविताए सकलित है।

नीम के पत्ते (1954)

'नीम के पत्ते' व्यग्य प्रधान कविताओ का सग्रह है। इसमे स्वातत्र्योत्तर भारत मे फैले भ्रष्टाचार और शासन-तत्र की शिथिलता के प्रति तीव्र असतोष की अभिव्यक्ति हुई है।

नील कुसुम (1954)

यह कवि की 40 कविताओ का सग्रह है, जो चार भागो मे विभाजित है। 'नील कुसुम' म दिनकर जी की राजनीतिक, सामाजिक और दार्शनिक चेतना से ओतप्रोत कविताए मिलती है।

चक्रवाल (1956)

इस सग्रह की महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमे कवि द्वारा लिखी हुई लगभग 76 पृष्ठ की लबी भूमिका है।

कविश्री (1956)

इसमे चौदह कविताए सगृहीत है। जैसे—बालिका से वधू, रास की मुरली प्रीति, नारी, प्रतीक्षा आदि।

सीपी और शख (1957)

यह 44 कविताओ का सग्रह है। इसमे कुछ कविताएं चीनी कवियो लारेन्स रिल्के और पर्शेन की कविताओ का अनुवाद है।

परशुराम की प्रतीक्षा (1962)

यह कृति चीनी आक्रमण के पश्चात् रची गयी है। इसम चीनी आक्रमण से उत्पन्न कवि की हार्दिक प्रतिक्रिया का अकन है। इसमे 18 कविताए है।

नये सुभाषित (1957)

यह एक छोटा सा सौ विषयो से सबंधित दो सौ पदो का सग्रह है। जिसमे अधिकाश पद हास्य-व्यग्यपूर्ण भावो से ओतप्रोत है।

आत्मा की आखें (1964)

यह कवि की एक सग्रह कृति है जिसकी प्रेरणा डी० एच० लारेन्स की कविताओ से मिली। कवि ने नयापन लाने के लिए मौलिक बिम्बो और चित्रो का प्रयोग किया है।

मुक्ति तिलक (1964)

इसमे मुक्तक कविताओ का सग्रह है।

हारे को हरि नाम (1970)

इसम ईश्वर के प्रति आस्था को व्यक्त किया है।

कोयला और कवित्व (1964)

यह एक नवीन सग्रह कृति है जिसम एक विषय को लेकर उसके विभिन्न पहलुओ पर प्रकाश डाला है। कला निष्काम आनन्द की भावना से उपास्य है उपयोगिता की दृष्टि से नही—इस काव्य सग्रह की रचनाए कवि के युगबोध और आत्मचिंतन स परिपुष्ट हैं। इन्हीं प्रश्नो को लेकर इसका समाधान प्रस्तुत किया है।

रश्मिलोक (1973)

इसम दिनकर जी की भूमिका महत्त्वपूण है।

समीक्षात्मक निबन्ध सग्रह

मिट्टी की ओर (1946)

यह दिनकर जी का प्रथम आलोचनात्मक ग्रथ है जिसमे केवल उन्ही 14 निबधो का सग्रह है जो छायावाद की कुहेलिका से निकलकर प्रसन्न आलोक के देश की ओर बढने वाली हिन्दी कविता को लक्ष्य करके लिखे गये है।[1]

---

1 दिनकर—मिट्टी की ओर, निवेदन

काव्य की भूमिका (1958)

इस आलोचनात्मक कृति मे दिनकर जी ने रीतिकालीन काव्यधारा से लेकर प्रयोगवाद तक के हिन्दी काव्य का विस्तृत विश्लेषण एव मूल्याकन किया है। इसमे काव्य स्वरूप, काव्यात्मा, काव्य हेतु, काव्य प्रयोजन, काव्य के तत्त्व, काव्य का आदर्श सबधी धारणाओ मे प्राय पूर्ववर्तियो की स्थापनाओ का मौलिक रीति से पुनर्विचार हुआ है।

पत, प्रसाद और मैथिलीशरण(1958)

इस कृति मे तीन प्रतिष्ठित महान् कवियो—पत, प्रसाद और मैथिलीशरण का अत्यन्त विस्तृत एव समीचीन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

शुद्ध कविता की खोज (1966)

इस कृति मे इन्होने पाश्चात्य एव प्राच्य साहित्य मनीषियो के मन्तव्यो के आलोक मे शुद्ध कविता के रूप म तटस्थ भाव से विचार किया है। यह प्रथ आलोचना साहित्य की श्रेष्ठ कृतियो मे से है।

साहित्यमुखी (1968)

इसमे 21 निबधो का सग्रह है जिसमे साहित्य तथा साहित्य से सबधित विषयो पर प्रकाश डाला है। कवि ने कुछ निबधो यथा—आधुनिकता और भारत धर्म, आधुनिकता का वरण आदि मे आधुनिकता के सबध मे अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनकी मान्यता है कि भारत मे आधुनिकता स्वयमेव उत्पन्न हुई थी।[1]

राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गाधी जी (1968)

यह पुस्तक आठ निबधो का सग्रह है। राष्ट्रभाषा मे गाधी जी के योगदान का विश्लेषण किया गया है।

निबध-सग्रह

अर्द्धनारीश्वर (1952)

यह दिनकर के निबधो का दूसरा सग्रह है। इसमे कविता के बारे मे बौद्धिक चिन्तन या विश्लेषण प्रधान निबध हैं।

---

1. दिनकर—साहित्यमुखी, पृ० 174

रेती के फूल (1954)

यह दिनकर जी के स्फुट निबंधो का सग्रह है। इन निबधो मे कवि अपने भावो और विचारो को अभिव्यक्त करने म पूर्ण सफल हुआ है।

राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता (1955)

इस निबंध सग्रह म भाषा और संस्कृति से सबधित निबध है।

वेणुवन (1958)

यह राजनीति और संस्कृति सबधी आलोचनात्मक निबधो का सग्रह है। जो विभिन्न कवियो सत साहित्य आदि पर लिखे गये है।

धर्म, नैतिकता और विज्ञान (1959)

यह केवल तीन निबधो का सग्रह है। पुरानी और नयी नैतिकता प्रेम एक है या दो, धर्म और विज्ञान।

वट-पीपल (1961)

यह भी मिले-जुले निबधो का सग्रह है।

राष्ट्रभाषा आदोलन और गाधी जी (1968)

इसमे राष्ट्रभाषा समस्या पर जोर दिया गया है।

साहित्यमुखी (1968)

इसम साहित्य एव साहित्य से सम्बद्ध विविध विषयो एव भाषणो का सग्रह है।

चेतन की शिखा (1973)

इसमे महर्षि अरविन्द के कृतित्व क मूल्याकन सबधी निबध सकलित है।

आधुनिक बोध (1973)

यह नौ निबधो का सग्रह है। इसम सभी निबध दिनकर जी के सुविचारित और सुचिन्तित है।

विवाह की मुसीबत (1974)

यह दिनकर जी की अतिम कृति है। इसमे आधुनिक युग की समस्या काम' पर विचार किया गया है।

सस्कृति से सम्बद्ध कृतियां

हमारी सांस्कृतिक एकता (1954)

यह पुस्तक नव निबधो का सग्रह है, जिसमे भारतीय राष्ट्रीय एकता पर जोर दिया गया है।

राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता (1955)

यह पुस्तक दिनकर जी के कुछ भाषणो और लेखो का सग्रह है। हिन्दी के बारे मे उन्होने लिखा है कि—"हिन्दी को हमने इसलिए चुना है कि उससे राष्ट्र की एकता का विकास होने वाला है इसलिए नही कि उसे बहाना बनाकर हम प्रान्तो के बीच की खाई को और चौडी कर दें।"[1]

सस्कृति के चार अध्याय (1956)

इस ग्रथ मे सस्कृति को चार खण्डो मे विभाजित किया गया है।

धर्म, नैतिकता और विज्ञान (1959)

इसमे रोचक शैली मे लिखित अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के तीन विचारोत्तेजक निबध सगृहीत है।

कहानी

उजली आग (1956)

यह कविता, कहानी और दर्शन की त्रिवेणी है। हिन्दी साहित्य की यह बेजोड रचना है।

बाल साहित्य

धूप-छांह (1947)

इसमे छह कविताए ही मौलिक है, शेष प्रसिद्ध कविताओ के छायानुवाद हैं।

चित्तौड़ का साका (1949)

इस पुस्तक मे चित्तौड के तीनों साकाओ की कहानिया, बालोपयोगी भाषा में अत्यन्त ओजस्वी ढग से कही गयी हैं।

---

1. दिनकर—राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता, पृ० 37

मिर्च का मजा (1951)

यह भी ऐसा ही संग्रह है।

सूरज का ब्याह (1955)

यह नौ कविताओं का संग्रह शिक्षाप्रद बाल-साहित्य है।

भारत की सांस्कृतिक कहानी (1955)

यह बालोपयोगी नव निबंधों का संग्रह है।

संस्मरण साहित्य

लोक देव नेहरू (1965)

प० जवाहरलाल नेहरू के निधनोपरांत दिनकर जी ने जो संस्मरण 'धर्मयुग' में लिखे उन्हीं का यह संग्रह है। यह ग्रंथ उपन्यास के समान रोचक और इतिहास के समान ज्ञानवर्धक है।

संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ (1970)

दिनकर जी ने इस संग्रह में अपने समकालीन महापुरुषों एवं साहित्यकारों की विशेषताओं को दर्शाया है।

यात्रा विवरणात्मक साहित्य

देश विदेश (1957)

इसमें दिनकर जी ने अपनी सौराष्ट्र, काश्मीर, यूरोप यात्रा का वर्णन किया है।

मेरी यात्राएं (1971)

इसमें यूरोप यात्रा, जर्मनी यात्रा, मारीशस यात्रा का वर्णन किया गया है।

इन संग्रहों में उन्होंने वहां की प्रकृति, रहन सहन तथा राजनीतिक, सामाजिक साहित्यिक स्थिति का वर्णन किया है।

विविध-साहित्य

चित्तौड़ का साका (1948)

यह बालोपयोगी साहित्य है।

हे राम (1968)

इसमें दिनकर जी के तीन रेडियो रूपकों का संग्रह है।

दिनकर की डायरी (1973)

इससे दिनकर जी की दिनचर्या का पता लगता है।

दिनकर जी के गद्य साहित्य का यह वैशिष्ट्य है कि वह नीरस विवेचनात्मक गद्य न होकर सरस काव्यात्मक एवं बिम्बात्मक गद्य हैं।[1] वस्तुतः गद्य और पद्य दोनों ही रचना क्षेत्रों में दिनकर जी ने समान अधिकार से लिखा है।

निष्कर्ष

दिनकर जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के मूल्यांकन से हम सहज ही इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वे बहुमुखी प्रतिभा के धनी, दुर्धर्ष चेतना के महान् कृतिकार थे। दिनकर के व्यक्तित्व की प्रखरता और रागात्मकता उनके कृतित्व में समग्रता से प्रतिबिम्बित हुई है। इनके व्यक्तिगत और पारिवारिक जीवन के संघर्ष ने उनकी रचनाओं को अधिक धारदार और प्रखर बनाया है। दिनकर की छवि हिन्दी के गद्य और पद्य साहित्य में समान अधिकार से लिखने वाले युगचेता और जनप्रिय रचनाकार के रूप में सदैव अविस्मरणीय बनी रहेगी। वे सांस्कृतिक विचारक, राष्ट्रभाषा हिन्दी के महान् सपूत, कामाध्यात्म के प्रकाण्ड पण्डित और क्रान्तिमन्त चेतना के कृतिकार के रूप में ही नहीं, वे राष्ट्रकवि के रूप में भी सम्मानित हुए। उनका विचारक स्वरूप गद्य के माध्यम से निबन्ध विधा में ही व्यक्त हुआ है। अस्तु निबन्धकार दिनकर निश्चय ही महान् है।

---

1 दिनकर के काव्य में जीवन दर्शन, पृ० 61

2

हिन्दी निबंध का स्वरूप विकास और निबंधकार दिनकर

हिन्दी साहित्य मे निबध गद्य की अन्य विधाओ(उपन्यास, कहानी, रिपोर्ताज, आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र आदि) की भांति आधुनिक काल म ही विकसित हुआ है। हिन्दी निबध विविध आयामो का स्पर्श करता हुआ गद्य की केन्द्रीय विधा के रूप म स्थापित हो चुका है। वस्तुत निबध व्यक्ति एव उससे सम्बद्ध परिवेश और स्थितियो की निर्बाध भावाभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने निबध का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए कहा है कि—'यदि गद्य कवियो या लेखको की कसौटी है तो निबध गद्य की कसौटी है।"[1] वस्तुत निबध रचनाकार के हृदय की कलात्मक अभिव्यक्ति है। निर्विवाद रूप से निबध गद्य की ऐसी विधा है जिसमे रचनाकार अपने व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, निजता और दृष्टिकोण का प्रतिपादन मौलिक ढग से करता है। तर्क, कथन, भगिमा, सवाद और शैली वैविध्य का समजन करते हुए पाठक की मनोभूमि पर अपना प्रभाव अकित करता है। वैचारिकता एव व्यक्तित्व प्रधान का ऐसा प्रभावपूर्ण एव रजक माध्यम निबध के अतिरिक्त अन्य किसी विधा मे नही है।

निबध : शाब्दिक व्युत्पत्ति एव पारिभाषिक विवेचन

'निबध' शब्द का अर्थ बांधना अथवा रोकना है। नि+बध (बांधना)+ घन् (सग्रह)। 'प्रबध' शब्द भी इसी का समानार्थी है—प्र+बध+अन् =बंधना। सस्कृत मे दोनो का एक ही अर्थ स्वीकारा गया है। इसमे पर्याय-

1 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 505

वाची के रूप में 'लेख' 'रचना', सदर्भ आदि का उल्लेख किया जाता है। प्रबंध शब्द तो आख्यान या कथा के तारतम्य पर आधृत काव्य के लिए प्रयुक्त होने लगा और 'प्रबंध-काव्य' के रूप में रूढ हो गया। आज निबंध जिन अर्थों में प्रयुक्त होता है, वह पाश्चात्य साहित्य की देन है। निबंध शब्द आज लैटिन के 'एग्जीजियर' (निश्चिततापूर्वक परीक्षण) से व्युत्पन्न 'ऐसाई (फ्रेंच) व ऐसे (अंगरेजी ऐसे) के अर्थ में प्रयुक्त होता है। यहा निबंध के सदर्भ मे पाश्चात्य एव पौर्वात्य विद्वानो के मतो का विश्लेषण समीचीन होगा।

पाश्चात्य मत

निबंध का जन्मदाता फ्रास का मिसेल इकुए सूर द मानतेन था। सन् 1850 मे एसेइस' नाम से मानतेन का निबंध सग्रह प्रकाश मे आया जिसमे 57 निबंध सगृहीत थे। सर्वप्रथम मानतेन ने ही अपनी रचनाओ को 'निबंध' की सज्ञा दी। इससे पूर्व 'ऐसे' का आशय प्रयास या परीक्षण रहा। साहित्य के सदर्भ मे 'ऐसे' शब्द का प्रयोग कर मानतेन ने नया आयाम जोडा। मानतेन ने निबंध को विचारो, उद्धरणो और कथाओ का मिश्रण माना है।[1] अगरेजी के प्रख्यात आलोचक रचनाकार डा० सेम्युअल जानसन ने निबंध की परिभाषा करते हुए कहा कि—"निबंध मस्तिष्क का आकस्मिक और उच्छृखल आवेग, असम्बद्ध और चिंतनहीन बुद्धि विलास है।'[2] सर एडमण्ड गास ने निबंध को गद्य मे सीमित आकार का सग्र माना है। इस लेख मे लेखक एक ही विषय से सबधित विचारो को असयत किन्तु सुगम ढग से व्यक्त करता है। जार्ज सेंटबरी निबंध को कलापूर्ण गद्य लेख के रूप में स्वीकारता है। मारिस ह्यूलट के विचारो म निबंध एक सतुष्ट व्यक्ति का मानसिक सतुलन एव औचित्य स्थिति मे स्वकथन मात्र है। फ्रास के प्रसिद्ध लेखक तथा आलोचक-मा बार ने निबंध को साहित्यिक अभिव्यजना का सबसे कठिन रूप माना है, क्योकि यह निबधकार म गागर मे सागर भरने की क्षमता का अनिवार्य होना अनिवार्य समझता है।[3] बेंसन ने निबंध की परिभाषा देते हुए लिखा है—'निबंध लेखन बहुत प्रिय साधन है। निबंध उसके अनुकूल पडता है, जिस लेखक म न प्रतिभा है और न ज्ञान विस्तार की जिज्ञासा और पाठक उसकी विविधता

1. Montanigne—Essay is Modkey of reflection, quotation and anecdotes
2 Dr Johnon—' A loose salley of mind and irregular undigested Piece of aragular and orderly performance "
3 डा० [illegible] माथुर—पाश्चात्य निबंध कला स उद्धृत

और हल्की रचना मे आनन्द लेता है ।[1] वस्तुत क्रेबल निबध के विषय म पूर्वाग्रह युक्त रहे है, यही कारण है कि उनका मत तर्कसम्मत एव समीचीन जान नही पडता क्योकि निबध केवल मनोरजन अथवा विनोद का साधन नही है। हा, इसे आत्मीयता एव निजता की प्रमुखता के कारण एक गुण के रूप मे अवश्य स्वीकृत किया जा सकता है। इस मत के विपरीत लोक्स निबध को गम्भीर विषयो का व्यवस्थित विश्लेषण करने वाला माध्यम स्वीकारते है।[2] बेकन का कहना है—"निबध गम्भीर और विशिष्ट विचारो का सक्षिप्त किन्तु सुगुम्फित रूपान्तरण है।"[3] हडसन निबध को आवश्यक रूप से व्यक्तिवादी स्वीकारते है ।[4]

पाश्चात्य विद्वानो द्वारा प्रस्तुत निबध की परिभाषाओ के अध्ययन-अनुशीलन के पश्चात् निम्नाकित तथ्य स्पष्ट होते है—

1 गद्य की सक्षिप्त रचना निबध है।
2 स्व व्यक्तित्व, भाव एव विचार की अभिव्यक्ति का माध्यम है।
3 यह असम्पूर्णता मे पूर्णता का समावेश होता है।
4 रचनाकार एव पाठक के प्रत्यक्ष सानिध्य का आधार है।

इस प्रकार पाश्चात्य विचारणा मे निबध गद्य की वह लघु विधा है, जिसमे रचनाकार अपनी निजता के साथ भावो एव विचारो की सुगुम्फित व्यजना करता है।

भारतीय मत

'निबध' का सर्वप्रथम प्रयोग सस्कृत साहित्य मे उपलब्ध होता है किन्तु वहा इसे विधागत स्वरूप मे ग्रहण नही किया गया। निबध का प्रयोग प्रमाणो के निबधन के कारण धर्मशास्त्रीय एव दार्शनिक विवेचना के ग्रथो के सदर्भ म होता था। हिन्दी मे निबध' का प्रयोग प्रथमत तुलसीदास ने प्रबध काव्य के सदर्भ मे किया है—' भापानिबधमतिमजुलमातनोति।"[5] आज निबध अपन रूढ परिवृत्त

1 Crable—"The Essay is most popular mode df writing It suits the writer who has neither takent nor Inclination to persue his enquiries further an generally the reader amused with variety and superficiality"
2 Lockes—"Ponderous volume closed packed with philosophic matter"
3 Bacon—"An Essay consists of few pages of concentrated wisdom with little claboration of the Ideas expressed"
4 Hudson—"The true essay is essentially personal"
5 डा धीरेन्द्र वर्मा (स०)—हिन्दी साहित्य कोश, पृ० 407-408

से निकलकर नवीन अर्थों में प्रयुक्त होने लगा है जो परम्परागत अर्थों से भिन्न अंगरेजी 'ऐसे' के अर्थ का पर्याय है। निबंध को वर्तमान में आत्माभिव्यक्ति का साधन स्वीकार किया गया है। निबंधकार स्वतन्त्रतापूर्वक किसी भी विषय पर अपने विचार बिना किसी आडम्बर के व्यक्त करता है। उसमें नियन्त्रण एवं निषेध का अभाव होता है। आज निबंध को विकास की जो धारा प्राप्त हुई है उसे देखते हुए उसे शब्दों में बाधना दुष्कर है तथापि विद्वानों ने इसे पारिभाषिक स्वरूप देने का प्रयत्न किया है। सम्यक् विश्लेषण हेतु निम्नांकित मतों पर विचार करना समीचीन होगा—

डा० गुलाबराय के मतानुसार—"निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक निजीपन, स्वच्छंदता सौष्ठव और सजीवता तथा आवश्यक संगीत और सम्बद्धता के साथ किया गया हो।"[1] डा० गणपतिचन्द्र गुप्त के अनुसार—"साहित्य की श्रेणी में आने वाले निबन्ध चाहे कितने ही गम्भीर क्यों न हों वे हमारे हृदय की भाव वीचियों को अवश्य उद्वेलित करते हैं।"[2] आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी का मतव्य है कि—"असम्पूर्णता का विचार न करने वाला गद्य रचना का यह प्रकार जिसमें स्वानुभूति की प्रधानता हो विषय निरूपण में स्वतन्त्रता हो, जिसमें लेखक का पूर्ण व्यक्तित्व प्रतिबिम्बित हो, जिसकी शैली मौलिक तथा साहित्यिक कोटि की हो निबन्ध कहलाएगा।'[3] आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के अनुसार—'वास्तविक निबन्ध वही होता है जिसमें लेखक किसी मन में उठे हुए भावात्मक विचार को दार्शनिक रूप से तत्त्व निरूपण की शैली से व्यक्त करे। साधारणतः निबन्ध वह साहित्य रूप है जो न बहुत बड़ा हो, न बहुत छोटा, जो गद्यात्मक हो, जिसमें किसी विषय का अत्यन्त सरल चलता सा विवरण हो, विशेषतः उस विषय का वर्णन हो जिसका स्वयं लेखक से सम्बन्ध हो। अनुभव और गम्भीर ज्ञान का संक्षिप्त और लघु परिणाम निबन्ध है।'[4] डा० जयनाथ नलिन के मतानुसार—'निबन्ध स्वाधीन चिंतन और निश्छल अनुभूतियों का सरस, सजीव और मर्यादित गद्यात्मक प्रकाशन है।'[5] श्री शिवदानसिंह चौहान के मत के अनुसार—'निबन्ध गद्य का अत्यन्त शक्तिशाली रूप विधान है। कुशल निबन्धकार अपने रचाव लाघव से अत्यन्त संक्षेप में बहुत बड़ी तत्त्व की बात सरल कलात्मक ढंग

---

1 डा० गुलाबराय—काव्य के रूप, पृ० 236
2 डा० गणपतिचन्द्र गुप्त—साहित्यिक निबंध, पृ० 428
3 आचार्य नंददुलारे वाजपेयी—निबंध निलय, प्राक्कथन से उद्धृत
4 आचार्य सीताराम चतुर्वेदी—समीक्षाशास्त्र, पृ० 972-73
5 जयनाथ नलिन—हिन्दी निबंधकार, पृ०10

से या सुबोध वैज्ञानिक पद्धति से पाठकों तक प्रेषित करता है।"[1] डा० रामगोपाल सिंह चौहान के अनुसार—"निबन्ध में लेखक विशेष की मानसिक चेतनागत भावात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है। उसमें एक निजीपन होता है, जिसमें लेखक सहज ही पाठक के साथ निकटता स्थापित कर लेता है। निबन्ध आत्मानुभूतियों का लेखन और पाठक के साथ परस्पर सचार करने का प्रयास है। निबन्ध में लेखक के व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति होती है। अपने उस व्यक्तित्व के आधार पर लेखक अपने निबन्ध में अपने कथन में सबलता, सशक्त आग्रह और प्रवाहशीलता उत्पन्न कर देता है।"[2] डा० भागीरथ मिश्र का मन्तव्य निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त हुआ है—"वह गद्य रचना जिसमें किसी विषय का शृंखलित विवेचन अथवा वैयक्तिक भाव या विचारधारा का क्रमबद्ध रोचक प्रकाशन प्रस्तुत किया जाता है, निबन्ध कहलाता है।"

हिन्दी साहित्य कोश में—"निबन्ध के लक्षणों में स्वच्छन्दता, सरलता, आडम्बरहीनता तथा घनिष्ठता और आत्मीयता के साथ लेखक के वैयक्तिक आत्मनिष्ठ दृष्टिकोण का भी उल्लेख किया जाता है परन्तु ये लक्षण विभिन्न लेखकों की कृतियों में कितने विभिन्न रूपों में मिलते हैं, इसे स्मरण रखना आवश्यक है। निबन्धकार की स्वच्छन्दता उच्छृंखलता नहीं है। उसकी अनियमितता में भी नियम है और उसकी अव्यवस्था में भी व्यवस्था है। ज्ञान के लिए उसे स्वतः अपनी मौलिक पद्धति खोजनी पड़ती है। अतः निबन्ध एक ऐसी कलाकृति बन जाता है कि जिसके नियम लेखक द्वारा ही आविष्कृत होते हैं। इसी प्रकार सहज, सरल, आडम्बरहीन आत्माभिव्यक्ति के लिए परिपक्व और विचारशील गम्भीर व्यक्तित्व की अपेक्षा है। यद्यपि उसकी कृति में प्रायः रचना की परिपक्वता का अभाव सा दिखाई देता है परन्तु पाठक के साथ लेखक की निकटता और आत्मीयता वास्तविक होती है। इसके अभाव में सफल कथात्मक निबंध रचना संभव नहीं। लेकिन बिना संकोच के लेखक अपने जीवन अनुभव सुनाता है। उसकी यह घनिष्ठता जितनी सच्ची और सघन होगी, उसका निबन्ध पाठकों पर उतना ही सीधा और तीव्र असर करेगा। ऐसी आत्मीयता के साथ निबंध लेखक पाठकों को अपने पाण्डित्य से अभिभूत नहीं करना चाहता और अधिकाधिक ऋजु और उदार रूप में प्रकट होता है। निबंध की वैयक्तिकता, आत्मनिष्ठा भी इसी आत्मीय दृष्टिकोण का परिणाम कही जा सकती है। स्वभावतः उससे भी अनेक रूप और परिणाम निकल सकते हैं। निबंध लेखक की आत्मनिष्ठा, वैयक्तिकता व्यक्ति सापेक्ष्य है। उसकी मात्रा में न्यूनता हो सकती है, उसका सर्वथा अभाव हो, ऐसा संभव नहीं है। निबंध लेखक की विचार प्रबलता, अनुभवशीलता और प्रौढ़ता का

---

1 शिवदान सिंह चौहान—हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष, पृ० 195

2 रामगोपाल सिंह चौहान—हिन्दी के गद्यकार और उनकी शैलियां, पृ० 59

परिचय देता है परन्तु यह एक विशेष मनोदशा (मूड) मे लिखा जाता है इसलिए उसमे परिपूर्णता स्वभावत नही होती है, परन्तु ऐसा नही कि वह लेखक के किसी भी विषय-सबधी विचारो का सक्षेप या सार हो। प्रयुक्त सीमित दृष्टिकोण से किसी विशेष मनोदशा के अन्तर्गत लेखक उसमे अपने विचार प्रकट करता है। परिणामस्वरूप निबध का आधार साधारणतया बहुत अधिक लम्बा नहीं हो सकता।"[1]

उपर्युक्त परिभाषाओ के सूक्ष्म अन्वीक्षण के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि इनमे निबध के अनिवार्य तत्त्वो का विवेचन तो किया गया है किन्तु स्वतत्र विश्लेषण की दृष्टि से य विवेचन अपूर्ण हैं। इस अपूर्णता का मूल कारण कालक्रम निजी दृष्टिकोण एव निबध विधा के प्रति रुझान रहा है। इन परिभाषाओ म निबध सबधी पाश्चात्य मान्यताओ का भी प्रभूत प्रभाव द्रष्टव्य है। इन परिभाषाओ के सम्यक् अनुशीलन के पश्चात् निम्नाकित तथ्य प्रकाशित होते हैं—

1 निबध गद्य की लघु रचना है जो अपने सीमित आकार मे ही विषय का प्रतिपादन और सम्प्रेषण करती है।
2 इसमे रचनाकार के व्यक्तित्व, दृष्टिकोण एव विचार की छाप रहती है।
3 निबध मे अनुभूति-प्रवणता, सरसता, स्वच्छन्दता एव अभिव्यजना लाघव विद्यमान रहते है, जिसके कारण विषय का रोचक प्रकाशन होता है।

निष्कर्षत "निबध साहित्य की उस गद्यात्मक विधा को कहा जाएगा जिसके लघु कलेवर मे रचनाकार अपनी निजी अनुभूतियो एव विचारो को स्वातंत्र्य बोध के साथ सुगुम्फित एव सुव्यवस्थित रूप मे जीवन्त अभिव्यक्ति देता है।"

निबन्ध की तात्त्विक विवेचना

निबध विषयक पारिभाषिक स्वरूप विवेचन के पश्चात् कुछ प्रमुख तथ्य सामने आते हैं, जिन्हें निबध के तत्त्वो के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। निबध के रचाव मे इन तत्त्वो की भूमिका महत्त्वपूर्ण है—

विचार तत्त्व

विचार निबध की प्रथम आवश्यकता है। स्वतत्र विचारो की अभिव्यक्ति को ही कतिपय विद्वानो ने निबध की सज्ञा दी है। विवेकशील प्राणी होने के कारण मनुष्य की तर्कबुद्धि उसके विचार-बोध की शक्ति होती है। रचनाकार निबध म अपनी इसी मूलभूत प्रवृत्ति का स्वछदतापूर्वक प्रयोग करता है। विषय चयन एव तज्जन्य गहनता विचार व्युत्पन्न करता है।

1 डा० धीरेन्द्र वर्मा—(स०)—हिन्दी साहित्य कोश, पृ० 408 409

भावानुभूति

जीवन की गति के साथ परिवेश से जुड़ा अनुभव रचना संसार को व्यापक स्वरूप प्रदान करता है। इन्हीं अनुभूतियों के फलस्वरूप उद्‌भूत भाव निबंध का विषय बनते हैं। भावात्मक निबंधों में भाव पक्ष की सबलता एवं प्रमुखता रहती है।

कल्पना-समाहार

अन्य विधाओं की भांति निबंध में विचार, संवेदना एवं सहृदयता आदि के साथ ही कल्पना का समाहार होता है। कल्पना की समाहृति रचना को जीवन्तता प्रदान करती है। सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि एवं कल्पना प्रभावोत्पादकता में सहायक सिद्ध होती है।

शैली

निबंध रचना में शैली की भूमिका प्राण तत्त्व के समान है। निबन्धकार के लिए शैलीगत सिद्धि एवं विशिष्टता होना अत्यावश्यक है। शैली के कारण ही वह लघु कलेवर में सुगठित अभिव्यक्ति में सफल हो सकता है।

वस्तुतः निबन्ध की सफलता विचार, भाव, कल्पना एवं शैली के सम्यक् प्रयोग पर निर्भर करती है। सम्यक् प्रयोग से ही रोचकता, सरसता एवं स्वाभाविकता का संचार कर निबन्धकार पाठक से नैकट्य स्थापित कर अपना प्रभाव सम्प्रेषण कर पाता है।

निबन्ध एवं समानधर्मी विधाएं

साहित्य सामान्यतः संवेदनशील सामाजिक की अनुभूतियों की कलात्मक अभिव्यक्ति होती है। यही कारण है कि उसके उपांगों के उपकरणों में बहुत सी समानताएं-असमानताएं प्रायः सर्वत्र मिलती हैं, किसी में कम किसी में ज्यादा।[1] गद्य की प्रमुख विधा के रूप में निबन्ध प्रतिष्ठित है। गद्य की अन्यान्य विधाएं निबन्ध से उद्‌भूत हैं इसलिए इनमें सूक्ष्म भिन्नताएं हैं। 'निबन्ध के स्वरूप को भलीभांति समझने हेतु उसकी अन्य विधाओं से तुलना समीचीन होगी।

निबन्ध और संस्मरण

निबन्ध की तरह संस्मरण भी हिन्दी के लिए नवीन विधा है। डा० पद्मसिंह शर्मा ने इस क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। सर्वश्री बनारसीदास चतुर्वेदी,

---

1 डा० गंगाप्रसाद गुप्त—हिन्दी साहित्य में निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 89

कन्हैयालाल प्रभाकर प्रभृति ने संस्मरण को नये आयाम प्रदान करते हुए विकसित किया है। यद्यपि संस्मरण और निबन्ध में निकट का सम्बन्ध है। "जिस प्रकार निबन्ध में किसी एक समय की विशेष मनोदशा की विशिष्ट अनुभूतियां तथा विचारों का चित्रण किया जाता है, उसी प्रकार संस्मरणों में भी किसी समय की एक विशेष स्थिति का चित्रण रहता है।"[1] तथापि दोनों में अन्तर है। संस्मरण प्राय प्रख्यात व्यक्तित्वों पर प्रख्यात व्यक्तियों द्वारा ही लिखे जाते हैं, निबन्ध में ऐसा बंधन नहीं है। संस्मरण में निबन्ध के विपरीत रचनाकार व्यक्ति के चरित्र से बंधा रहता है। संस्मरण घटना प्रधान होता है, निबन्ध भावों या विचारों की अभिव्यक्ति होता है।

निबन्ध और आत्मकथा

आत्मकथा—जैसा नाम से स्पष्ट है—स्वयं लेखक की कथा होती है, जिसमें वह अपने जीवन से सम्बन्धित तथ्यों का तटस्थ होकर वर्णन करता है। अतीत की स्मृतियां इसमें समाहित होती हैं। "आत्मकथाकार को व्यक्तियों के संस्मरण लिखने वाले कलाकार को जिन तीन बातों का ध्यान रखना पड़ता है, उनके अतिरिक्त एक और बात का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि न तो भावावेश में आकर अथवा अत्यधिक नम्रता के साथ अपनी दुर्बलताओं का अतिरंजित वर्णन करे और न ही किसी प्रकार के आत्म आस्फालन का आखेट बनकर आत्म-प्रशंसा करने लग जाये।"[2]

निबन्ध में रचनाकार की स्व सहभागिता आत्मकथा के समान ही होती है। दोनों में स्व-व्यक्तित्व का अंकन होता है। आत्मकथा आकार एवं स्वरूप की दृष्टि से निबन्ध की तुलना में विस्तृत होती है। निबन्ध में सद्य उद्भूत भावनाओं की व्यंजना होती है, आत्मकथा स्मृतियों का अंकन करती है। अतएव उसमें मनोवेग एवं अनुभूतियों का अभाव रहता है। निबन्ध में अनुभूति एवं विचार की प्रमुखता होती है। निबन्ध में रचनाकार की तथ्य के साथ पूर्ण संलग्नता रहती है आत्मकथा में मूल्यांकन की तटस्थता, आत्मकथा का क्षेत्र निबन्ध की अपेक्षा अधिक व्यापक एवं बहुआयामी होता है।

निबन्ध और जीवनी

जीवनी भी गद्य साहित्य की एक सशक्त विधा है। आज इस कोटि की विपुल

---

1 डा० गंगाप्रसाद गुप्त—हिन्दी साहित्य में निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 95

2 डा० देवीशरण रस्तोगी—हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास, पृ० 257

रचनाएं उपलब्ध है। इसमे लेखक किसी प्रख्यात व्यक्ति (वह जीवन के किसी क्षेत्र का हो) के जीवन का क्रमबद्ध परिचय प्रस्तुत करता है। "इसमे लेखक का जीवनी के नायक के साथ निजी सम्पर्क होता है। इसमे रोचक प्रभावपूर्ण घटनाओ और विवरणो को चुनकर जीवन-चरित्र का पूरा रूप प्रस्तुत किया जाता है। नायक कोई प्रसिद्ध व्यक्ति होता है। घटनाओ का सच्चा सजीव वर्णन और उनके द्वारा व्यक्ति की स्थिति व्यक्तित्व, योग्यता, निपुणता और चारित्र्य का प्रभावपूर्ण लेखा प्रस्तुत करना ही इसका ध्येय होता है।"[1] वस्तुत "जीवनी साहित्य म एक स्वतन्त्र विधा के रूप मे अपने चरित्र नायक के अन्तर और बाहर, उसके जीवन सम्बन्धी घटनाओ, परिस्थितियो, व्यक्तियो का उसके गुणो और दोषो का महान् व्यक्ति बनने मे उसके जीवन की विकास गति का तथा उसके जीवन के प्रभाव का कलात्मक, रोचक, सजीव, सहृदयतापूर्ण किन्तु तटस्थ चित्रण होता है।"[2] इस विधा म ऐतिहासिकता एव कल्पना का कलात्मक सयोग होता है। निबन्ध और जीवनी वैयक्तिकता की प्रधानता एव शैलीगत भूमि पर निकट और समानधर्मा है। विषय चयन की दोनो मे स्वतन्त्रता एव व्यापकता होती है। समानता के तत्व होते हुए भी दोनो मे अन्तर विद्यमान है।

जीवनी मे जीवन का आद्योपान्त वर्णन रहता है। निबन्ध मे किसी एक विषय पर विचारो की पुष्टि होती है। जीवनी म लेखक दूसरे के वैयक्तिक जीवन का वर्णन करता है किन्तु निबन्ध मे निबन्धकार का व्यक्तित्व प्रमुख रहता है। जीवनी मे लेखकीय पक्षधरता की आशका होती है, निबन्ध इसके विपरीत स्वय लेखकीय व्यक्तित्व का दर्पण होता है। जीवनी मे निबन्ध से भिन्न घटनाओ का सस्पर्श मिलता है क्योकि जीवनी नायक के जीवन का इतिवृत्त होती है, जो निबन्ध के आकार की लघुता एव शैली की रोचकता स भिन्न है।

निबन्ध एव रेखाचित्र

रेखाचित्र का शाब्दिक अर्थ है—रेखाओ के माध्यम से निर्मित कोई चित्र जो कलम या तूलिका से निर्मित हो। हिन्दी मे यह पाश्चात्य विधा 'स्केच' के पर्याय के रूप मे विकसित हुई। रेखाचित्र किसी प्राणी के चरित्र का भावात्मक शब्द-चित्र है। रचनाकार इसमे चित्रकार की भाति उस प्राणी के बाह्य एव आतरिक सौन्दर्य को उभारता है। डा० भागीरथ मिश्र के मतानुसार—"अपने सम्पर्क मे आए किसी विलक्षण व्यक्तित्व अथवा सवदना को जगाने वाली, सामान्य विशेष-

1 डा० भागीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ० 76
2 डा० रामगोपालसिंह चौहान—हिन्दी गद्यकार और उनकी शैलिया, पृ० 208

ताओ से युक्त किसी प्रतिनिधि चरित्र के मर्मस्पर्शी स्वरूप को देखी, सुनी या सकलित घटनाओ की पृष्ठभूमि इन प्रकार उभारकर रखना कि उसका हमारे हृदय मे एक निश्चित प्रभाव अकित हो जाए, रेखाचित्र कहलाता है।"[1] यह विधा भावात्मक एव व्यक्तिवादी निबन्धो से नि सृत है। "निबन्ध के विचार क्षेत्र मे लाघव की प्रवृत्ति जगी। उसके फलस्वरूप ऐसी विचारबद्ध कृतिया भी निर्मित होने लगी जो रेखाचित्र या स्थूल चित्र (स्केच) के रूप मे सामने आयी। इनमे कही तो कुछ शब्दो को ही लेकर विचार सरणि चला और कही व्यक्ति को, कही वस्तु को, कही भाव को, कही स्मृति तथा कही व्यग्य को।"[2] वस्तुत यह निबन्ध एव कहानी के बीच की विधा है। निबध एव रेखाचित्र दोनो मे वैयक्तिकता की प्रमुखता होती है। रेखाचित्र मे प्राणी की विशिष्टताओ को इस प्रकार व्यजित किया जाता है कि एक विशेष आकार प्राप्त कर चित्रात्मकता उभरती है।

निबन्ध और रेखाचित्र दोनो कलात्मक विधाए होते हुए भी एक दूसरे स भिन्न है। रेखाचित्र विषय की दृष्टि से सीमित क्षेत्र मे व्यापक रहता है जबकि निबन्ध स्वछन्द एव व्यापक होता है। रेखाचित्र मे जहा हृदय पक्ष का प्राधान्य होता है, वही निबन्ध मे हृदय पक्ष की सबलता के साथ विचार या मस्तिष्क पक्ष की अवहेलना नही होती। रेखाचित्र जहा व्यक्तित्व की आकृति उपस्थित करता है वही निबन्ध म विषय-विवेचन, अनुभूति अकन एव विचार-प्रस्तुति होती है। रेखाचित्र शब्द के अर्थ रग द्वारा तो निबन्ध मे शब्द विचार लहर बनकर प्रभावात्मकता लाते है। इस प्रकार निबन्ध और रेखाचित्र पृथक्-पृथक् जीवन्त साहित्यिक विधाए है।

निबन्ध और रिपोर्ताज

'रिपोर्ताज' मूलत पत्रकारिता के क्षेत्र की विधा है। पत्रकार जब किसी घटना की कलात्मक शब्दबद्ध प्रस्तुति करता है तो 'रिपोर्ताज' आकार ग्रहण करता है। वस्तुत रिपोर्ताज फ्रासीसी शब्द है जो अगरजी 'रिपोर्ट' के आधार पर हिन्दी म रिपोर्ताज के रूप मे स्वीकृत हुआ। "आज के क्रातियुग मे रिपोर्ताज ऐसा रूप-विधान है जिसके द्वारा वर्तमान की सघर्षमयी वास्तविकता का अनुभव पाठको तक पहुचाया जा सकता है। रिपोर्ताज म उपन्यास और कहानी के कई गुण रहते है लेकिन उसके अन्दर तैयार किये गए परिवश, चरित्र और घटना मे यथार्थता और सत्यता अधिक मात्रा मे रहती है।"[3] वस्तुत अखबारी रपट ही

1 डा० भागीरथ मिश्र—काव्यशास्त्र, पृ० 97
2 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र—हिन्दी का सामयिक साहित्य
3 शिवदान सिंह चौहान—साहित्यानुशीलन, पृ० 56

जब भावना एवं संवेदना से जुड़कर कलात्मक आकृति पाती है तो रिपोर्ताज की संज्ञा पाती है। अखबारी रिपोर्ट में कलात्मकता नहीं होती। "रिपोर्ताज में तीन बातें प्रमुख हैं—(1) वर्ण्य वस्तु या घटना, (2) घटना में भाग लेने वाले पात्र, (3) लेखक की सजगता, सचेष्टता, सूक्ष्म दृष्टि और कल्पना। रिपोर्ताज की विशेषता संक्षिप्तीकरण में है।"[1] वर्तमान में संसक्ति, तथ्यात्मकता एवं कथात्मकता रिपोर्ताज के लिए अनिवार्य तत्त्व है। निबन्ध लेखक को जिस प्रकार विचार और भाव के साथ संक्षिप्त कलेवर की सीमा में रहना पड़ता है उसी प्रकार रिपोर्ताज लेखक को फैलाव की स्वच्छन्दता नहीं है। इस दृष्टि से वह निबन्ध के तथा शैली की दृष्टि से कहानी के निकट है। रिपोर्ताज में घटना अथवा दृश्य का यथातथ्य अंकन होता है तथा इसमें व्यक्तित्व निक्षेपण नहीं होता किन्तु निबन्ध में व्यक्तित्व का प्रभूत प्रभाव दृष्टिगत होता है और उसमें वर्ण्य के प्रति यथातथ्य वर्णन का आग्रह नहीं होता। आकार की दृष्टि से संक्षिप्तता रिपोर्ताज की शर्त है, निबन्ध की नहीं।

निबन्ध के समानधर्मी विधाओं से तुलनात्मक अनुशीलन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि निबन्ध एक स्वतन्त्र विधा है। विकास की गति के साथ उसमें भी परिवर्तन परिवर्धन हो रहे हैं तथा निबन्ध सम्बन्धी मान्यताएं और परिभाषाएं नया आकार ग्रहण कर रही हैं।

निबन्धों का वर्गीकरण

परिमाण के स्तर में निबन्धों के प्रकारों का उल्लेख करना दुष्कर है किन्तु उसकी आंतरिक एवं बाह्य विविधता को आधार बनाकर वर्गीकरण किया जा सकता है। विवेचन पद्धति, भाषा शैली, विषय, विचार, भाव एवं अनुभूतियां आदि को आधार बनाकर निबन्ध के भेद किए जाते हैं। अध्ययन विश्लेषण की सुविधा के लिए निबन्ध का वर्गीकरण निम्नांकित प्रकार से किया जाता है—

विषयगत आधार

1 साहित्यिक निबन्ध
2 सामाजिक धार्मिक निबन्ध
3 सांस्कृतिक निबन्ध
4 राजनीतिक निबन्ध
5 अन्य

---

1 डा० गंगाप्रसाद गुप्त—हिन्दी निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 101

शैलीगत अनुभूत्यात्मक आधार

1 विचारात्मक निबन्ध
2 भावात्मक निबन्ध
3 विवरणात्मक निबन्ध
4 वर्णनात्मक निबन्ध
5 आत्मपरक निबन्ध
6 समीक्षात्मक निबन्ध

हिन्दी निबन्ध का विकासात्मक परिदृश्य

हिन्दी साहित्य मे निबंध की विकास यात्रा का सूत्रपात आधुनिक काल मे भारतेन्दु युग मे हुआ। मुद्रण कला की उन्नति, समाचार-पत्रो के प्रसार एव प्रचलन तथा गद्य के विकास से साहित्य की विधा के रूप मे निबन्ध विधा प्रगति-पथ पर अग्रसर हुई। इसके अतिरिक्त सामाजिक-राजनीतिक चेतना के उन्मेष एव पश्चिमी साहित्य के सम्पर्क ने निबन्ध के विकास मे महती भूमिका प्रदान की। हिन्दी निबन्ध की अद्यतन काल तक की यात्रा को समीक्षको ने चार कालो म विभक्त किया है।

(क) भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीय सास्कृतिक चेतनापरक निबन्ध (सन् 1843 से 1903 तक)
(ख) द्विवेदी युगीन परिष्कृत एव परिमार्जित निबन्ध (सन् 1903 से 1920 तक)
(ग) शुक्ल युगीन प्रौढ निबन्ध (सन् 1920 से 1947 तक)
(घ) स्वातन्त्र्योत्तर निबन्ध साहित्य (सन् 1947 से आज तक)

भारतेन्दु युगीन राष्ट्रीय-सास्कृतिक चेतनापरक निबन्ध-सरचना (1843 से 1903 तक)

राष्ट्रीय जागरण की नव सास्कृतिक एव राजनीतिक चेतना के उन्मेष काल मे भारतेन्दु युग का आरम्भ हुआ। इस युग का निबन्ध लेखन त्रिविधोन्मुखी था। समाज, धर्म, सस्कृति, शिक्षा और साहित्यिक सभी मे अनेकश सुधार अपेक्षित थे। निबन्ध मे इस अपेक्षा को निर्वाहित करने की क्षमता थी। पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम स सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक, साहित्यिक, प्रकृति वर्णन, व्यग्य विनोद, यात्रा-विवरण आदि समस्त विषय निबन्ध के कलेवर म प्रस्तुति पाने लगे। इस युग मे निबन्ध पत्रकारिता के गुण आत्मसात किये था। यही कारण है कि इन निबन्धो मे विषय-व्यापकता एव वैविध्य है। इस युग के प्रमुख निबन्धकारो मे युग प्रवर्तक भारतेन्दु के अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट (मेला-

हेला, वकील, आशा, बात, घटना, माधुर्य आदि प्रसिद्ध निबंध), बद्रीनारायण चौधरी प्रेमधन, (दिल्ली दरबार में मित्र मण्डली, समय आदि), प्रतापनारायण मिश्र (दांत, पट, भौं, मूछ, नाकादि), बालमुकुन्द गुप्त (शिवशम्भू का चिट्ठा), राधाचरण गोस्वामी (यमपुरी की यात्रा), अम्बिकादत्त व्यास प्रभृति के नाम उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु युग के निबन्ध सचमुच एक प्रयास हैं। उनमें न बुद्धि-वैभव है न पाण्डित्य प्रदर्शन और न ग्रन्थ ज्ञानज्ञापन। इन लेखकों की रुचि सभी विषयों में है पर किसी भी विषय में ये अंतिम बात नहीं कहते बल्कि पाठक के साथ सोचना विचारना चाहते हैं। उनमें कुछ ऐसी आत्मीयता और बेतकल्लुफी है कि पाठक भी उनसे घुल मिल जाना चाहता है।[1] वस्तुतः भारतेन्दु युग के निबन्धों में आत्मपरकता, वैयक्तिकता के साथ साथ सामाजिकता का समन्वय मिलता है। उनके हास्य व्यंग्य की चोट का केन्द्र राजनीतिक, सामाजिक एवं धार्मिक विषमता रही है। गम्भीर विषय को सरल सरस प्रस्तुति देना इस काल में निबन्धकारों का वैशिष्ट्य रहा है। इस काल के निबन्धों का प्रबलतम स्वर वर्तमान पर क्षोभ, राष्ट्रीय जागरण, भावोद्वेलन एवं सामाजिक चेतना के उत्थान का रहा है। वस्तुतः "इस काल के लेखकों को निबन्ध रचना में जितनी सफलता मिली उतनी कविता और नाटक में नहीं।"[2]

भारतेन्दु युगीन निबन्धों की प्रवृत्तियों को निम्नांकित रूपों में प्रस्तुत किया जा सकता है।

1 यह काल आरम्भिक निबन्धों का था अतएव इसमें परिपक्वता एवं प्रौढता दृष्टिगत नहीं होती किन्तु तात्त्विक दृष्टि से पूर्ण हैं।
2 इस काल के निबन्धों में विषय वैविध्य उपलब्ध होता है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक आदि सभी विषयों पर निबंध लिखे गये।
3 साहित्य की अन्य विधाओं की भांति सामाजिक विसंगतियों, आर्थिक शोषण, राजनीतिक षड्यन्त्र, धार्मिक कुचक्रों के विरोध में जागृति के स्वर का उद्घोष किया। साहित्यिक आग्रह इन निबन्धों में कम था।
4 इस युग के निबन्धों में हास्य और व्यंग्य का स्वर प्रमुख रहा है। उपदेशात्मकता इस काल के निबन्धों का दूसरा महत्त्वपूर्ण पक्ष है।
5 इस युग के निबंधकार पत्रकारिता से जुड़े थे तथा निबन्ध साहित्य प्रायः पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशमान हुआ।

भारतेन्दु युगीन निबंध साहित्य के आकलन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि

1 डा० शिवकुमार शर्मा—हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियां, पृ० 643
2 डा० रामविलास शर्मा—भारतेन्दु युग, पृ० 95

कविता, नाटक तथा अन्य विधाओं की अपेक्षा निबंध के क्षेत्र में इस काल के रचनाकार का रुझान रहा है। इसका कारण पत्र-पत्रिकाएं रहीं। जिनका सम्पादन ऐसे लोगों के हाथ में था जो न केवल स्वयं निबंध के लेखक थे अपितु उन्होंने दूसरों को निबंध लेखन हेतु प्रोत्साहित भी किया। साथ ही निबंध आलेखन युग और पत्रकारिता की प्रकृति के अनुरूप भी था।

द्विवेदी युगीन परिमार्जित निबंध संरचना (1903 से 1920 तक)

'द्विवेदी युग का आरम्भ हम आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के 'सरस्वती' के सम्पादन कार्य भार सभालने के समय सन् 1903 से मान सकते हैं।'[1] द्विवेदी जी के आविर्भाव के साथ ही गम्भीर और उच्च श्रेणी के साहित्यिक निबंधों की परम्परा का सूत्रपात हुआ। भाषा का संस्कार एवं परिमार्जन इस युग की देन रही है। द्विवेदी जी की परिष्कार नीति का प्रभाव इस काल के रचनाकारों पर तो स्पष्टतः पड़ा ही, साथ ही परवर्ती रचनाकारों को भी प्रेरणा मिली। इस युग के प्रमुख निबंधकारों में स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (कवि और कविता प्रतिभा, कविता, साहित्य की महत्ता, कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता, हंस संदेश, दण्ड देव का आत्मनिवेदन, कवि कर्त्तव्य, नाटक और उपन्यास, क्रोध, लोभ आदि नूतन विचारात्मक निबंध) का नाम उल्लेखनीय है। सर्वश्री माधवप्रसाद मिश्र (धृत, सत्य), गोविन्द नारायण मिश्र, श्यामसुन्दर दास (भारतीय साहित्य की विशेषताएं, समाज और साहित्य, कर्त्तव्य और कथा), चन्द्रधर शर्मा गुलेरी (कछुआ धर्म, मारेसि मोहि कुठाव, संगीत), सरदार पूर्णसिंह (आचरण की सभ्यता, सच्ची वीरता, मजदूरी और प्रेम), पद्मसिंह शर्मा (पद्म पराग एवं प्रबंध मंजरी संग्रह) प्रभृति द्विवेदी युग के प्रमुख निबंधकार रहे हैं। इस युग के निबंधों में अर्जित ज्ञान का पुनरावर्तन प्रमुखता से मिलता है। विषय वैविध्य का अभाव है। डा० गणपतिचन्द्र गुप्त ने द्विवेदी युग के निबंधों का मूल्यांकन करते हुए लिखा है—"इस युग के निबंध सामान्यतः विचार प्रधान ही हैं। भारतेन्दु युगीन निबंधों की भांति इनमें तत्कालीन जीवन की अभिव्यक्ति एवं राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक परिस्थितियों का अंकन नहीं मिलता। हास्य और व्यंग्य के स्थान पर इनमें गम्भीरता अधिक है। अध्यापक जी एवं गुलेरी जी के निबंधों को छोड़कर शेष में वैयक्तिकता का प्रस्फुटन नहीं मिलता। मौलिकता, नवीनता ताजगी भी इनमें नहीं है। वस्तुतः ये निबंध कम, विचारों के संग्रह अधिक हैं। व्याकरण की दृष्टि से अवश्य इन निबंधों की भाषा शुद्ध एवं परिमार्जित है।"[2]

1. डा० गणपतिचन्द्र गुप्त—साहित्यिक निबंध, पृ० 433
2. वही, पृ० 436

वस्तुत इस काल के निबंधो मे उपदेशात्मकता अधिक है। इस युग मे पत्रकारिता की स्वच्छन्दता समाप्त हो गई तथा निबंधकार की जनोन्मुखता लुप्त हो गई। निबंध मध्य वर्ग, शिक्षित एव शिष्ट समाज के निकट आया। यही कारण है कि विषय वैविध्य समाप्त हो गया तथा वैचारिक गाम्भीर्य आ गया, बौद्धिकता का समावेश हुआ। सम्पूर्ण द्विवेदी युगीन निबंध सरचना के अनुशीलन के आधार पर इस युग की प्रमुख प्रवृत्तिया इस प्रकार निर्धारित की जा सकती है—

1 इस युग मे वैचारिक, भावात्मक, आलोचनात्मक एव विवरणात्मक निबंध लिखे गए।
2 ये निबंध भाषात्मक दृष्टि से परिष्कृत एव व्याकरण के नियमानुकूल हैं। सस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली का प्रयोग बहुत हुआ है।
3 इस युग के निबंधो मे भारतेन्दु युग की तुलना म गम्भीरता एव प्रौढता दृष्टिगत होती है।
4 इस युग मे मुख्यत साहित्य, मनोविज्ञान, सस्कृति, इतिहास जैसे विषयो पर अधिक निबंध लिखे गये।

वस्तुत द्विवेदी युगीन निबंध भारतेन्दु युग के उन्मेषकालीन निबंध को एक तात्त्विक स्वरूप एव सही दिशा देने वाले है। भाषा एव शैली की दृष्टि से द्विवेदी युग का निबंध साहित्य अधिक विकसित एव प्रौढ है। हास्य व्यग्य के स्थान पर द्विवेदी युग मे गाम्भीर्य दृष्टिगत होता है।

शुक्ल युगीन प्रौढ निबंध सरचना (1920 से 1947 तक)

हिन्दी निबंध लेखन कला एव शैली का पूर्ण विकास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधो म मिलता है। "इनके निबंध अन्त प्रयास से निकली हुई सहज विचारधारा के प्रतिरूप हैं। उनके आगमन से हिन्दी जगत को नई अनुभूति, नये विचार और नयी भावाभिव्यक्ति शैली के दर्शन हुए"[1] 'चिन्तामणि' नामक दो भागो मे उनका प्रसिद्ध निबंध सग्रह है। शुक्ल जी के निबंधो की पुष्ट भाषा, कसावट से पूर्ण शैली, विचारो की परिपक्वता, उनका क्रम विन्यास, सभी कुछ नवीन और हिन्दी निबंध कला को उत्कर्ष प्रदान करने वाला है। वैज्ञानिक रचना दृष्टि, मनोवैज्ञानिक शैली, उच्चकोटि की भावुकता, विरल तथ्यपरकता, तीक्ष्ण व्यग्य दृष्टि शुक्ल जी के निबंधो की उल्लेखनीय विशेषताए हैं, जिन्होने उनके समकालीन ही नही परवर्ती निबंधकारो को भी प्रभावित किया। वस्तुत तत्कालीन निबंध साहित्य की समस्त प्रवृत्तियो के दर्शन शुक्ल जी के निबंधो मे होते हैं। शुक्ल युग के अन्य निबंधकारो मे डा० गुलाबराय (मेरी असफलताए, मेरे निबंध

---

1 डा० शिवकुमार शर्मा—हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तिया, पृ० 645

संग्रह), बख्शी पदुमलाल पुन्नालाल (उत्सव, रामलाल पण्डित, समाज सेवा, विज्ञान, नाम आदि निबन्ध) माखनलाल चतुर्वेदी (जिनके निबंध माखन रचनावली मे प्रकाशित हो चुके है), वासुदेवशरण अग्रवाल, वियोगी हरि के नाम उल्लेखनीय हैं। समीक्षात्मक निबंध लेखकों मे प्रसाद (काव्य कला तथा अन्य निबंध), महादेवी वर्मा प्रमुख हैं। शातिप्रिय द्विवेदी शुक्लोत्तर युग मे भी सृजनशील रहे। इस काल मे समग्रत निबधो मे गम्भीर्य एव सूक्ष्मता आयी। साहित्य, मनोविज्ञान, संस्कृति, इतिहास जैसे विशेष गम्भीर विषयो को नवीन किन्तु मौलिक दृष्टि से प्रस्तुत किया गया। भाषा शैली की भी दृष्टि से भी इस युग का निबंध साहित्य अधिक विकसित एव परिपक्व है। वस्तुत इस काल मे हिन्दी निबंध बहुमुखी दिशाओ मे विकसनशील हुआ। विचार, भाषा एवं शैली सभी दृष्टियो से शुक्ल युग हिन्दी निबंध का उत्कर्ष काल है।

शुक्ल युगीन निबधो की प्रवृत्तियां इस प्रकार निर्धारित की जा सकती हैं—

1 इस युग के निबंधो मे चिन्तन के स्तर पर गम्भीरता तथा वैचारिक प्रौढता आयी।

2- विचार के साथ-साथ भावात्मकता का मणिकाचन योग इस युग के निबंधो मे देखा जा सकता है।

3 इस युग मे सास्कृतिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक, यात्रा सम्बन्धी विषयो पर निबंध लिखे गये। गभीर समीक्षात्मक निबंध भी लिखे गये।

4 समीक्षात्मक निबधो मे प्रौढता आयी तथा प्रचुर मात्रा मे इस प्रकार के निबंध लिखे गये।

5 शैली (गवेषणात्मक, सूत्रात्मक, विवेचनात्मक आदि) वैविध्य भी इस काल मे देखने को मिलता है।

6 भाषा के स्तर पर परिष्कृति एव प्रौढता के दर्शन होते हैं। उसमे युगीन विचार गाम्भीर्य को अभिव्यक्त करने की क्षमता विद्यमान है।

निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि द्विवेदी युग मे विषय विस्तार, परिमार्जन का जो स्वरूप दृष्टिगत हुआ है, शुक्ल युग मे उसे उत्कर्ष प्राप्त हुआ। विवेचन एव बौद्धिकता को प्रमुखता मिली। साथ ही सूक्ष्म विश्लेषण दृष्टि का समावेश हुआ। इस युग मे निबंध साहित्य मे विविध वैचारिक वादो का समावेश हुआ और बौद्धिक विचारधाराए विवेकपूर्वक प्रविष्ट हुई। सरसता के साथ गम्भीरता तथा व्यापकता के साथ गहनता की समाहृति शुक्लयुगीन निबंधो की उल्लेखनीय विशेषता कही जा सकती है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी निबंध संरचना (1947 से आज तक)

इस युग को शुक्लोत्तर युग एवं समकालीन युग की संज्ञा दी जाती है। यह हिन्दी निबंध के इतिहास मे उत्कर्ष का काल है। इसमे निबंधकारो के तीन वर्ग मिलते हैं—

1. वे निबंधकार (कवि, उपन्यासकार, कहानीकार आदि) के साथ निबध लेखक भी है।
2. समीक्षक निबंधकार
3. ललित निबंधकार

प्रथम श्रेणी मे महादेवी वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, प्रभाकर माचवे, मुक्तिबोध, रामधारीसिंह 'दिनकर', सच्चिदानद हीरानद वात्स्यायन अज्ञेय, जैनेन्द्र, विश्वम्भर नाथ उपाध्याय, डा० देवराज, धर्मवीर भारती प्रभृति के नाम उल्लेखनीय है। द्वितीय वर्ग मे नगेन्द्र, रामविलास शर्मा, नन्ददुलारे वाजपेयी, नामवर सिंह, रमेश कुन्तल मेघ आदि तथा तृतीय वर्ग मे विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी आदि प्रमुख है।

स्वातंत्र्योत्तर युगीन निबंध साहित्य विविधोन्मुखी रूप से विकसित हुआ। इस काल के निबंधो मे समीक्षात्मक, संस्मरणात्मक, यात्रा-वृत्तांत, रिपोर्ताज आदि शैलिया विकसित हुई। मुंह, गला, गाली, बिल्ली, मकान (प्रभाकर माचवे), एक युग: एक प्रतीक, रेखाए बोल उठी (क्षेमेन्द्र सत्यार्थी) जैसे सामान्य विषयो पर निबंध लिखे गये तो अतीत के चलचित्र, स्मृति की रेखाए (महादेवी वर्मा), क्या भूलूं क्या याद करूं (बच्चन) संग्रहो मे संस्मरणात्मक निबंध संगृहीत है। संस्कृति और साहित्य, प्रगति और परम्परा (डा० रामविलास शर्मा), विचार और विवेचन, विचार और विश्लेषण (डा० नगेन्द्र), आलोचना के प्रतिमान, साहित्यानुशील (शिवदानसिंह चौहान), क्योंकि समय शब्द है (रमेश कुन्तल मेघ), जलते उबलते प्रश्न (डा० विश्वम्भर उपाध्याय), साहित्य सिद्धात और समालोचन एवं साहित्यक निबंध (देवीप्रसाद गुप्त) आदि गम्भीर समीक्षात्मक निबंधो के संग्रह हैं जो इस युग की प्रवृत्तियो का प्रतिनिधित्व करते हैं।

ललित निबंध स्वातन्त्र्योत्तर निबंध की विशिष्ट उपलब्धि है। रामवृक्ष बेनीपुरी (गेहू और गुलाब, वन्दे वाणीविनायकौ), हजारीप्रसाद द्विवेदी (अशोक के फूल, कुटज, कल्पलता, विचार और वितर्क संग्रह), विद्यानिवास मिश्र (छितवन की छाह, मेरे हाथ का मुकुट भीग रहा है, पर्णकुटी, तुम चन्दन हम पानी संग्रह), कुबेरनाथ राय (प्रिया नील कण्ठी, रस आखेटक, विषाद योग, गन्धमादन संग्रह) के इस क्षेत्र मे प्रयास स्तुत्य है।

इस युग के निबंधो की प्रवृत्तियां इस प्रकार है—

1. इस युग के निबंधो मे शैली वैविध्य दृष्टिगत होता है।

2 स्वातन्त्र्योत्तर काल मे हास्य व्यग्यपरक निबध लेखन की परम्परा विकसित हुई जिसे हरिशकर परसाई, लक्ष्मीकान्त वर्मा, नरेन्द्र कोहली, शरद जोशी, श्रीलाल शुक्ल प्रभृति न समृद्ध किया।
3 साहित्य, समाज, राजनीति, धर्म, सस्कृति, विज्ञान एव युग जीवन की समस्याए सभी विषय निबध की परिधि मे आ गये किन्तु साहित्यिक निबध लेखन की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती है।
4 इस युग मे विषय वस्तु के प्रति सूक्ष्म निरीक्षण एव विश्लेषणात्मक वृत्ति का विकास हुआ।
5 समीक्ष्य निबधो मे युगीन विचार धाराओ (मार्क्सवाद, समाजवाद, मानववाद, गाधीवाद आदि) का प्रभूत प्रभाव सृजन-प्रेरणा के रूप मे दृष्टिगत होता है।
6 हिन्दी निबध स्वतन्त्र पुस्तको, पत्रिकाओ एव समाचारपत्रो के माध्यम से प्रकाशित होने लगे।

हिन्दी निबध के विकासात्मक स्वरूप विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी निबध ने अल्प अवधि मे पर्याप्त विकास किया है। कुछ निबधो मे पाश्चात्य विचारधाराओ की जुगाली का क्रम इसे दूषित भी कर रहा है। इसके विपरीत कुबेरनाथ राय एव विद्यानिवास मिश्र के निबधो मे मौलिक चिंतन एव वैयक्तिकता की छाप के कारण हिन्दी निबध सृजन को नये आयाम प्रदान किये हैं जो प्रशस्य एव अनुकरणीय है।

निबधकार रामधारीसिंह दिनकर

हिन्दी निबध के विकासक्रम के अनुशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस गद्य विधा का प्रारभ एव विकास आधुनिक काल की देन होते हुए भी रचना की दृष्टि से उसने प्रौढ स्वरूप ग्रहण कर लिया है। हिन्दी निबध विधा राष्ट्रीय स्वाधीनता आन्दोलन मे समानान्तर द्रुत गति से विकसित हुई है अत उसमे स्वाधीनता पूर्व और पश्चात् की राजनीतिक, सामाजिक और सास्कृतिक चेतना का समावेश स्वयमेव हो गया है। भारतेन्दु, द्विवेदी और शुक्ल युगीन हिन्दी निबध-रचना की प्रवृत्तिया एव विशेषताए परवर्ती काल की निबध-रचना मे भी परिलक्षित हुई है। आधुनिक काल के निबधकारो मे दिनकर जी के निबध साहित्य का योगदान इस अर्थ मे ऐतिहासिक है कि उन्होने विषय और शैली दोनो ही दृष्टियो से हिन्दी निबध को नई दिशा की ओर उन्मुख किया।

दिनकर जी कालक्रम की दृष्टि से स्वातन्त्र्योत्तर युगीन निबध परपरा के रचनाकार हैं। कवि के रूप मे जितनी ख्याति उन्हे मिली, उनका गद्यकार रूप मूल्याकन के अभाव मे प्रकाशमान न हो सका। 'मिट्टी की ओर', 'रेती के फूल',

'अर्धनारीश्वर', 'वेणुवन', 'साहित्यमुखी', 'शुद्ध कविता की खोज' आदि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह है। वस्तुत वे जितने श्रेष्ठ और उच्चकोटि के कवि थे उतने ही सिद्धहस्त निबंधकार भी हैं। सूक्ष्म चिन्तन एव गभीर विश्लेषण उनके निबंधो की विशिष्टता है। वैयक्तिकता, भावात्मकता, मौलिक दृष्टि और व्याख्यात्मकता उनके निबंधो की अन्य विशेषताए हैं। दिनकर ने साहित्य, इतिहास, सस्कृति, मनोविज्ञान एव युगीन समस्याओ को अपने निबंधो का विषय बनाया है। दिनकर के निबंधो की सबसे बडी विशेषता सप्रेषणीयता का गुण है। साथ ही उनमे विश्वसनीयता, स्पष्टवादिता एव तथ्यपरकता के गुण भी विद्यमान है। युगीन विचारधाराओ की स्पष्ट छाप उनके निबंधो मे देखी जा सकती है। सास्कृतिक उत्थान एव मानववादी स्वर उनके सभी निबंधो मे ध्वनित हुआ है। भाषा के स्तर पर भी दिनकर के निबंध प्रौढ हैं तथा शैली की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण हैं।

निबंध के क्षेत्र मे उनकी उल्लेखनीय कृतिया इस प्रकार हैं—

1 रेती के फूल
2 वेणुवन
3 अर्धनारीश्वर
4 शुद्ध कविता की खोज
5. पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण
6. मिट्टी की ओर
7 काव्य की भूमिका
8 साहित्य भूमिका
9 वट-पीपल
10 राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गाधी जी
11. हमारी सांस्कृतिक एकता
12 राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता
13 धर्म, नैतिकता और विज्ञान
14. सस्कृति के चार अध्याय।

उपर्युक्त निबन्ध-सकलनो मे रचनात्मक और समालोचनात्मक दोनो ही प्रकार के निबंध सकलित हैं। दिनकर जी ने प्रत्येक कोटि की निबन्ध संरचना मे बौद्धिक विवेचन की प्रवृत्ति को प्रमुखता प्रदान की है। फलस्वरूप दिनकर के निबन्धों में विचार तत्त्व भाव और शैली की अपेक्षा अधिक प्रखर है। निबंधकार के रूप मे दिनकर जी की रचना यात्रा 'मिट्टी की ओर' (सन् 1946) से आरम्भ होकर 'धर्म नैतिकता और विज्ञान' तक तीन दशको से अधिक फैली हुई है। उन्होंने जिस भी विषय पर लेखनी उठायी, उसे अपने ढंग से प्रतिपादित किया है, इस तथ्य की सर्वाधिक सम्पुष्टि 'वेणुवन' के सकलित निबन्धो से होती है। निबंध-

कार के रूप में दिनकर जी की विशिष्ट पहचान न बन पाने का कारण उनके निबन्धों में बौद्धिक विश्लेषण की प्रवृत्ति की प्रमुखता ही कही जा सकती है। सजग समीक्षक अर्थात् समकालीन रचनाकारों के समालोचक होने के कारण भी दिनकर जी का निबन्धकार रूप प्राय परोक्ष ही बना रहा। वे ललित निबन्ध तो नहीं ही लिख सके, साथ ही निबन्धों में लालित्य की सृष्टि के प्रति भी सजग नहीं रहे। फिर भी दिनकर जी की निबन्ध रचना का अपना महत्त्व है और उन्होंने हिन्दी निबन्ध सृजन परम्परा में उल्लेखनीय योगदान किया है।

निष्कर्ष

हिन्दी निबन्ध की विकास परम्परा के अन्वेषण एवं मूल्यांकन से इस तथ्य की सम्पुष्टि होती है कि निबन्ध रचना युग सापेक्ष चिन्तन से अनुप्रेरित एवं बौद्धिक विश्लेषण की प्रवृत्ति की ओर उन्मुख रही है। भारतेन्दु और द्विवेदीयुगीन निबन्धकारों ने रागतत्त्व को प्रमुखता प्रदान करते हुए व्यंग्य विनोद का समाहार भी अपनी रचना शैली में किया। उन्होंने हल्के-फुल्के समाजोपयोगी सामान्य विषयों पर भी निबंध लिखे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के पदार्पण से निबंध और समालोचना के क्षेत्र में प्रौढ़ता और गम्भीरता का सूत्रपात हुआ। शुक्ल जी हिन्दी निबन्ध रचना के शलाका पुरुष के रूप में उभरे। शुक्लोत्तर निबन्ध रचना में व्यक्ति व्यंजक और ललित निबंधकारों ने अपनी अलग पहचान कायम की। सर्वश्री हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र और कुबेरनाथ राय इसी परम्परा के ललित निबन्धकार हैं। निबन्धकार के रूप में दिनकर जी ने हिन्दी निबन्ध परम्परा की सभी प्रमुख प्रवृत्तियों को अपनी रचना में आत्मसात किया। दिनकर जी के निबन्धों में तर्कसम्मत विश्लेषण की प्रवृति ने उन्हें विशिष्ट कोटि के निबंधकारों के रूप में प्रतिष्ठित किया। कवि, विचारक और समीक्षक की भांति निबन्धकार दिनकर जी की निबन्ध रचना भी प्रशस्य है।

3

दिनकर का निबंध साहित्य : परिचयात्मक विवेचन एवं वर्गीकरण

भारतीय संस्कृति के प्रति अटूट आस्था दिनकर जी की विचारधारा की मूल शक्ति है। दिनकर जी ने निबन्धों के माध्यम से भारतीय संस्कृति के वैविध्य और वैशिष्ट्य को रेखांकित कर निबन्ध सरचना के क्षेत्र मे नयी दिशा का उन्मेष किया है। उनकी विचारधारा मुख्यत जनोन्मुखी रही है। उत्कट राष्ट्रीयता का उद्‌घोष उनके निबन्धो मे सर्वत्र लक्षित किया जा सकता है। जहा दिनकर का काव्य राग और पराग, कामाध्यात्म और राष्ट्रीयता का स्वरोत्पल है वहा उनकी निबन्ध सरचना एक प्रबुद्ध विचारक एव प्रखर चिन्तक की दृष्टि का जीवन्त प्रमाण है। उनके निबन्ध व्यापक तथा गहन अनुभूति की समन्वयात्मक अभिव्यक्ति है। दिनकर के निबन्धो मे विषयो की विविधता है। आपके निबन्धो ने संस्कृति और साहित्य से लेकर दैनदिन जीवन की गतिविधियो, क्रिया-व्यापारो और अनुभूतियो तक को शक्तिमन्त अभिव्यक्ति दी है। उनके निबन्ध गम्भीर चिन्तन-मनन के जीवन्त दस्तावेज हैं।

दिनकर का निबन्ध साहित्य : परिचयात्मक परिबोध

दिनकर कृत निबन्ध-सग्रह काल-क्रमानुसार इस प्रकार है—

1 मिट्टी की ओर — सन् १९४६
2 अर्द्धनारीश्वर — १९५२
3 रेती के फूल — १९५४
4 काव्य की भूमिका
5 पत, प्रसाद और मैथिलीशरण

6 वेणुवन 1958
7 वट-पीपल 1961
8 शुद्ध कविता की खोज 1966
9 साहित्यमुखी 1968

उपर्युक्त निबन्ध-संग्रहों का परिचयात्मक विवेचन इस प्रकार है—

मिट्टी की ओर

'मिट्टी की ओर' दिनकर जी का प्रथम निबन्ध-संग्रह है। इसका प्रकाशन सन् 1946 में हुआ। इसमें साहित्यिक विषयों पर समीक्षात्मक शैली में लिखे गये निबन्ध संगृहीत हैं। इसमें दिनकर जी ने किसी विषय विशेष का संपूर्ण विवेचन नहीं किया है। उन्होंने उन कविताओं की नवीन प्रवृत्तियों और समस्याओं को विवेचनीय विषय बनाया है, जो छायावाद की सीमा को लाँघकर नई दिशा की ओर उन्मुख हो रही थी। इसमें 'इतिहास के दृष्टिकोण से', 'दृश्य और अदृश्य का सेतु' 'कला में सोद्देश्यता का प्रश्न', 'हिन्दी कविता पर अशक्तता का दोष', 'वर्तमान कविता की प्रेरक शक्तियाँ', 'समकालीन सत्य से कविता का वियोग', हिन्दी कविता और छन्द', 'प्रगतिवाद—समकालीन की व्याख्या', हिंदी काव्य समीक्षा का दिशा निर्देश' 'साहित्य और राजनीति', 'कवि श्री सियारामशरण गुप्त' एवं 'तुम घर कब आओगे कवि' और 'खड़ी बोली का प्रतिनिधि कवि' बनिशाला हो मधुशाला' शीर्षक चौदह निबन्ध संगृहीत है। इन निबन्धों में उनके काव्य सिद्धांतों को भी अभिव्यक्ति मिली है। मानव जीवन और समाज को दृष्टि-पथ में रखते हुए उन्होंने काव्य में शिव और सुन्दर की प्रतिष्ठा की है। दिनकर की रचना दृष्टि कवि, कविता एवं समीक्षा प्रत्ययों पर ही केन्द्रित रही है। दिनकर की समीक्षा दृष्टि चिन्ताशीलता एवं तार्किकता को इन निबन्धों में पर्याप्त अवसर मिला है। ये निबन्ध प्रबुद्ध पाठक में 'कविता की समझ' के नये द्वार खोलने में सक्षम हैं यही इनकी रचनात्मक सिद्धि और सफलता है।

अर्द्धनारीश्वर

'अर्द्धनारीश्वर' सन् 1952 में प्रकाशित दिनकर का दूसरा निबन्ध संग्रह है। इसके बारे में दिनकर 'आमुख' में लिखते हैं—इस संग्रह में ऐसे निबन्ध हैं जो मन बहलाव में लिखे जाने के कारण कविता की चौहद्दी के पास पड़ते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जिनमें बौद्धिक चिंतन या विश्लेषण प्रधान है। इसीलिए मैंने इस संग्रह का नाम 'अर्द्धनारीश्वर' रखा है।[1] इसमें इक्कीस निबन्धों का संग्रह है

1 दिनकर—अर्द्धनारीश्वर, आमुख

जिनके शीर्षक इस प्रकार है—मन्दिर और राजभवन, और चाहिए किरण जगत को और चाहिए चिनगारी, दीपक की लौ अपनी ओर, हड्डी का चिराग (ये भावात्मक शैली के निबन्ध है), महाकाव्य की वेला, कविता का भविष्य, नई कविता के उत्थान की रेखायें, पाकिस्तान के पीछे साहित्य की प्रेरणा, स्वतन्त्रता के बाद, समाजवाद के अन्दर साहित्य, रजत और आलोक की कविता, कविता राजनीति और विज्ञान, गाधी से मार्क्स की परिष्कृति, गुप्तजी कवि के रूप म, कविवर मधुर, जार्ज रसल का साहित्यिक चिंतन, रवीन्द्र जयन्ती के दिन, रवीन्द्रनाथ की राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता, क्या रवीन्द्र अभारतीय है ? महर्षि अरविन्द की साहित्य साधना एव कला के अर्द्धनारीश्वर। मन्दिर और राजभवन, और चाहिए किरण जगत को और चाहिए चिनगारी, दीपक की लौ अपनी ओर तथा हड्डी का चिराग भावात्मक श्रेणी के निबन्ध है जिनमे आध्यात्मिकता से भौतिकता की यात्रा की गई है। गाधी से मार्क्स, गुप्त जी, रवीन्द्रनाथ एव रसल के माध्यम से आलोचनात्मक चिंतन सबधी निबन्ध है। जिनमे समाज, सस्कृति एव व्यक्ति का सही सन्दर्भ खोजते हुए लक्ष्योन्मुख दृष्टि मुखर हुई है। वस्तुत इस सग्रह के निबन्ध गम्भीर चिंतन एव सुव्यवस्थित विचारधारा के द्योतक है।

रेती के फूल

'रेती के फूल' निबन्ध सग्रह सन् 1954 मे प्रकाशित सकलन है। यह सग्रह क्रम की दृष्टि से तृतीय है। इसमे मनोविज्ञान, सस्कृति साहित्य कला आदि विषयो पर रचित पन्द्रह निबन्ध सगृहीत है। 'हिम्मत और जिंदगी' कर्म की महत्ता प्रतिपादित करता है तो 'चालीस की उम्र' काल की अवधारणा एव महत्त्व पर बल देता है। 'ईर्ष्या तू न गई मेरे मन से' मनोविज्ञान पर आधारित गम्भीर भावो की व्यजना करता है। 'हृदय की राह', 'कर्म और वाणी', 'खड्ग और वीणा एव 'विजय के आसू' वैचारिक किंतु नवयुवको म प्रेरणा की लौ जगाने वाले आत्म-परक निबध है तथा 'कला धर्म और विज्ञान, 'राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता' विचार प्रधान निबध। 'भविष्य के लिए लिखने की बात' आत्मपरक शैली म रचित है। 'सस्कृति है क्या' तथा 'भारत एक है' तथा 'भगवान बुद्ध' सास्कृतिक तथा हिन्दी कविता म एकता का प्रवाह' राष्ट्रवादी चिन्तन का साहित्य विषयक निबध है। 'नेता नही नागरिक चाहिए' राजनीतिक सोच पर आधृत मूल्य चिन्तनपरक निबंध है। इन निबन्धो मे दिनकर जी अपने भावो और विचारो को सशक्त रूप म अभिव्यक्त करने मे सफल हुए। इन निबन्धो की विशेषता यह है कि दिनकर का जीवन-दर्शन और सृजन दृष्टि दोनो पाठक के समक्ष उभरकर आती हैं। ये दिनकर के तेजस्वी व्यक्तित्व एव ओजस्वी कृतित्व के प्रखर उद्धरण है।

काव्य की भूमिका

दिनकर का समीक्ष्य निबन्ध-संग्रह सन् 1958 मे प्रकाशित चतुर्थ संग्रह है। 'इसमे रीतिकाल का नया मूल्यांकन', 'छायावाद की भूमिका', 'छायावादोत्तर काल', 'प्रयोगवाद', 'कोमलता से कठोरता की ओर', 'भविष्य की कविता', 'कविता ज्ञान है या आनन्द', 'रूप काव्य एव विचार काव्य', प्रेरणा का स्वरूप', 'सत्य शिव सुन्दरम्', एव 'कविता की परख' शीर्षक ग्यारह निबन्धो का संग्रह है। समीक्ष्य निबन्धो की प्रकृति के संदर्भ मे दिनकर जी संग्रह की भूमिका मे कहते हैं—"आरम्भ के चार निबन्धो मे ऐतिहासिक क्रम से रीतिकाल से लेकर प्रयोगवाद तक की प्रमुख प्रवृत्तियो का विवेचन किया है। पाचवें निबन्ध का विषय भी बहुत कुछ यही है। और छठे निबन्ध मे यह समझने की कोशिश की गई है कि वैज्ञानिक युग में कविता अपने किन गुणो पर जोर देकर अपना अस्तित्व कायम रख सकती है।"[1] इस संग्रह के निबन्धो मे साहित्यिक समस्याओ एव इतिहास के सदर्भों को सशक्त प्रस्तुत की गई है। इनमे जहा वे साहित्य के इतिहास के अस्पर्शित पक्षो को उद्घाटित करने मे सक्षम हुए हैं, वही मौलिक चिन्तन शक्ति का परिचय भी दिया है। ये निबन्ध सृजनात्मक सामर्थ्य एव गम्भीर विचारक सूत्रो का प्रमाण हैं तथा आलोचनात्मक दृष्टि को विकसित करन मे दिनकर के आदान के स्वरूप को भी स्पष्ट करते हैं। इन निबन्धो की अन्य विशेषता यह है कि दिनकर ने जहा साहित्य के अन्तरग पक्षो को उद्घाटित किया है वही साहित्य के सामाजिक दायित्व को भी प्रकाशित किया है। इन निबन्धो मे साहित्य विषयक विचारो मे एक अन्विति है, निरन्तरता है, एक प्रवाह है तथा प्रभावोत्पादकता भी विद्यमान है।

पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण

सन् 1958 मे प्रकाशित इस संग्रह मे तीन निबन्ध सगृहीत हैं। इनके शीर्षक इस प्रकार हैं—'पुनरुत्थान के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त', 'कामायनी दोष रहित, दूषण सहित' एव 'विचारक कवि पत।' शोध और तेवर की दृष्टि से ये तीनो निबन्ध 'काव्य की भूमिका' संग्रह के अग थ किन्तु कलेवर के अनावश्यक विस्तार से बचने हेतु तीन निबन्धो को अलग पुस्तक का आकार दिया गया है। प्रथम निबध 'पुनरुत्थान के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त' मे पुनरुत्थान के स्वरूप को उद्घाटित करते हुए गुप्त जी के काव्य के सास्कृतिक पक्ष को उभारते हुए भारतीय परिप्रेक्ष्य मे उनकी महत्ता का प्रतिपादन किया है। मूलत इस निबन्ध

1. दिनकर—काव्य की भूमिका, 'दो शब्द'

का ध्येय उत्कट राष्ट्रीयता का उद्घोष है। द्वितीय निबन्ध 'कामायनी दोषरहित दूषण सहित' प्रसाद कृत 'कामायनी' की सृजन सामर्थ्य एव सीमा का लेखा-जोखा है। उन्होंने 'कामायनी' का मूल्याकन करते समय इस सूत्र को सामने रखा कि—'कविता न केवल भाषा है, न केवल भाव या विचार।'[1] इसी आधार पर उसके गुण-दोषो का सम्यक् मूल्याकन किया है। तृतीय निबन्ध 'विचारक कवि पत' मे कविवर सुमित्रानदन पत की 'गुजन' परवर्ती साहित्यिक प्रवृत्तियो का विवेचन है। दिनकर की मान्यता है कि—"पत साहित्य मे पल्लव, वीणा, गुजन और ग्रथि को जो प्रसिद्धि मिली वह पतजी के बाद की पुस्तको को नसीब न हुई। अतएव मैंने पल्लव, वीणा गुजन और ग्रथि को छोड दिया है। इस निबन्ध मे मुख्य ध्येय यह रहा है कि गुजन के बाद अब तक पत जी क्या करते रह है।"[2] दिनकर जी ने तीनों ही निबन्धो मे तर्कपूर्ण साहित्यिक विश्लेषण किया है। इन निबन्धो मे दिनकर का साहित्यकार बहुत ऊचाई पर जा पहुचा है। सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति, सुगुम्फित भाषा विधान एव मौलिक चिन्तन सभी कुछ दिनकर की रचना सामर्थ्य को ही प्रमाणित करता है। विचार के साथ भाव का प्रवाह, भाषा के साथ शैली वैविध्य, दृष्टि के साथ सृष्टि सभी कुछ उनके इन निबन्धो को स्थायी महत्त्व का सिद्ध करता है।

वेणुवन

'वेणुवन' दिनकर के साहित्यिक, सास्कृतिक एव राजनीतिक विचारो का निबन्ध सकलन है। इसका प्रकाशन सन् 1958 मे हुआ। साहित्यिक निबन्धो मे 'मैथिल कोकिल विद्यापति', 'विद्यापति और ब्रज बुलि', 'महादेवी जी की वेदना', 'निर्गुण पथ की सामाजिक पृष्ठभूमि' उल्लेख्य है। सास्कृतिक निबन्ध है—सस्कृति सगम, बौद्ध धर्म की विश्वव्यापकता। राजनीतिक है—शाति की समस्या एव जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। वस्तुत इन निबन्धो मे दिनकर का सफल निबन्धकार रूप उभर गया है। इन निबन्धो म ये पूर्व निबन्ध रचना की अपेक्षा स्पष्ट दृष्टिगत होत है। निबन्धो की गरिमा मे प्रौढ चिन्तन एव गम्भीर विचार प्रस्तुत हुए है। सब जगह उनका प्रगतिशील-मानवतावादी चिन्तन मुखर रहा है। निश्चय ही उनकी स्थापनाए मौलिक और अप्रतिम है। साथ ही ये निबन्ध दिनकर की निबन्ध यात्रा मे विकास के सोपान के समान प्रतीत होते है।

वट-पीपल

इस निबध-सकलन का प्रकाशन सन् 1961 मे हुआ। इसमे सस्मरणात्मक,

---

1. दिनकर—पत, प्रसाद और मैथिलीशरण, पृ० 72-73
2. वही, पृ० 98

सांस्कृतिक एवं साहित्यिक निबंध संगृहीत हैं। पुण्यलोक जायसवाल जी, श्री राहुल सांकृत्यायन, पं० बालकृष्ण शर्मा नवीन, पं० सुमित्रानन्दन पंत, मामा वरेरकर, रुक्मणि देवी और उनका कला चित्र तथा पौनेण्ड के राष्ट्रकवि शीर्षक निबंध संस्मरणात्मक है। इनमें उपर्युक्त व्यक्तित्वों तथा उनके कृतित्व का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। लेखक की दृष्टि में नारी, संस्कृति और सभ्यता, नया भारत कैसा हो, चार सांस्कृतिक क्रान्तियां एवं कबीर के स्वप्न, सांस्कृतिक चेतनापरक निबंध हैं। एक कविता की जन्मकथा, साहित्यिक धर्म, आर्टी कला, महाकाव्य में सत्य और कल्पना, साहित्यिक निबंध हैं। 'देश भाषा क्यों' युगीन भाषा समस्या पर लिखा निबंध है। ये निबंध दिनकर की सहज समझ, दृष्टि एवं सौम्य सृष्टि के उद्धरण हैं। इनमें तत्त्वाग्रह उतना नहीं जितना आत्मीयता का आग्रह है। इनमें दिनकर का कवि, विचारक, संस्कृति चेता इतिहास स्वरूप एक साथ जी उठा है।

शुद्ध कविता की खोज

दिनकर जी के निबंधों का आठवां संकलन है—'शुद्ध कविता की खोज।' इसका प्रकाशन सन् 1966 में हुआ। इस पुस्तक का केन्द्रीय तत्त्व है—यूरोप में प्रचलित नई कविता का आंदोलन। दिनकर जी कहते हैं—"नयी कविता का आंदोलन यूरोप में लगभग सौ वर्षों से चल रहा है। आश्चर्य है वह अब भी पुराना नहीं पड़ा है। उसके भीतर से बराबर नये आयाम प्रकट होते जा रहे हैं, बराबर नयी चिनगारियां छिटकती जा रही हैं। ' पुराने आलोचकों को नई कविता को छूने में अप्रियता एवं कुछ संकोच का भी अनुभव होता है। वर्तमान पुस्तक इसी महान् आंदोलन को समझने का विनम्र प्रयास है।" हिन्दी के लेखक कवि, पाठक अंग्रेजी अथवा किसी विदेशी भाषा के द्वारा पाश्चात्य साहित्य द्वारा सीधे सम्पर्क में नहीं हैं, इस पुस्तक का उद्देश्य विशेषतः उन्हीं के साथ वार्तालाप करना है।"[1] साथ ही इस पुस्तक में भारतीय साहित्य से इतर साहित्य में प्रचलित उन काव्य सम्प्रदायों का पर्यावलोकन किया गया है, जो नयी कविता से संबंधित हैं। 'शुद्ध कविता की खोज' संग्रह में अनेक रचनाएं निबंध कोटि की नहीं हैं यथा—'कविता और शुद्ध कविता', 'शुद्ध कविता का इतिहास', 'भाग एक और दो', 'कविता में दुरूहता' 'शुद्ध काव्य की सीमाएं', 'परिभाषाहीन विद्रोह', एवं 'साहित्य में आधुनिक बोध' आदि। किन्तु इस संकलन में दिनकर जी के महत्व-पूर्ण निबंध है—'मनीषा और समाज', 'कला में व्यक्तित्व और चरित्र' एवं 'कला का संन्यास'। उनमें विचारों की प्रधानता सहज देखी जा सकती है। इसके निबंध साहित्यिक हैं जिनके विस्तृत कलेवर में गहन अध्ययन, गम्भीर चिन्तन, सूक्ष्म

1 दिनकर—शुद्ध कविता की खोज, भूमिका

निरीक्षण शक्ति एवं विचार शक्ति समाहित है, जो दिनकर के व्यक्तित्व को मूर्त करती हैं। भाषा के स्तर पर इसके निबंध पूर्व के संकलनों से कहीं आगे हैं तथा दिनकर की अपूर्व गद्य रचना सामर्थ्य के परिचायक भी हैं।

साहित्यमुखी

'साहित्यमुखी' संग्रह का प्रकाशन सन् 1968 में हुआ। दिनकर जी कहते हैं कि—"साहित्य अथवा साहित्य से संबंधित विषयों पर मैंने जो निबंध लिखे या भाषण दिए हैं, उनका संग्रह 'साहित्यमुखी' के नाम से निकल रहा है।"[1] समीक्ष्य संग्रह में इक्कीस निबंध संगृहीत हैं जिनके शीर्षक इस प्रकार हैं—शीर्षक मुक्त चिन्तन, आधुनिकता और भारत धर्म, शेक्सपीयर, कविता में परिवेश और मूल्य, निराला जी को श्रद्धांजलि, मराठी के कवि केशव सुत, आधुनिकता का वरण, इलियट का हिन्दी अनुवाद, चार काव्य संग्रह, हिन्दी साहित्य पर गांधीवाद का प्रभाव, सर्वभाषा कवि सम्मेलन, लेखकों का शिविर, डोगरी कविताएं, हिन्दी और उसकी उप भाषाओं का सम्बन्ध, महात्मा टालस्टाय, राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता, इश्क की इन्तिहा है बेताबी, हिन्दी साहित्य में निगम धारा', युद्ध और कविता, शिक्षा के पांच लक्षण एवं साहित्य में आधुनिकता। इस संग्रह में आधुनिकता, शिक्षा, भाषा, संस्कृति सम्बन्धी विषयों पर निबंध लिखे गये हैं। ये सभी दिनकर जी के सुविचारित एवं सुचिन्तित निबंध हैं। इनमें प्रौढ़ और परिपक्व विचारों का भास मिलता है। इनमें उनकी गहन-जीवन दृष्टि का प्रतिफल है। इनमें दिनकर सुव्यवस्थित विचार-सूत्रों का अवलम्ब लिये क्रियमाण रहे हैं। संकलित निबंधों के आधार पर कहा जा सकता है कि दिनकर पर प्रगतिशील विचारधारा, मानवतावादी विचारधारा एवं राष्ट्रवादी चिन्तन का प्रभूत प्रभाव है। समग्रत इन निबंधों में दिनकर की अन्तर्दृष्टि एवं गहरी समझ के दर्शन होते हैं। ये निबंध न केवल हिन्दी निबंध साहित्य की निधि हैं अपितु आलोचना के क्षेत्र में भी नई दिशा देने में समर्थ हैं। इस दृष्टि से इस संग्रह का दोहरा महत्त्व है।

निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि दिनकर जी का निबंध साहित्य उनकी काव्य-संरचना के समान ही परिमाण की दृष्टि से विपुल है। वस्तुत उन्होंने निबंध साहित्य का सृजन काव्य के समानान्तर ही किया है। यही कारण है कि उनका निबंध और काव्य समान रूप से निश्चित जीवन-दर्शन एवं विचारधाराओं से अनुप्राणित हैं। दिनकर के निबंध काव्य के ही समान सरस, रंजक, ज्ञानवर्धक एवं सम्प्रेरणीय हैं। आपके निबंधों में निबंधकार का गहन चिन्तन-मनन और कला-

1. दिनकर—साहित्यमुखी, 'दो शब्द'

प्रम गवत्र दिखाई देता है। परिचयात्मक विवेचन से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि दिनकर के निबंध सकलनो म कुछ निबन्धकी कसौटी पर खरे नही उतरते हैं। इसका मूल कारण वैयक्तिकता एव भावात्मकता का अभाव है। य शुद्ध साहित्यिक आलोचना क निबंध हैं। दिनकर के निबंध विवेचनात्मक शैली प्रधान हैं। इनम विषय का क्रमबद्ध विवेचन सचेष्ट होकर जीवन्त भाषा म किया गया है। दिनकर जी की निबंध सरचना मे विषयगत वैविध्य निरप्रकार से अगाध ज्ञान एव समुन्नत भावबोध का परिचायक है।

दिनकर क निबंधो का वर्गीकरण

दिनकर का विपुल निबंध साहित्य विषय वविध्य की दृष्टि स माध्य सरचना के समानान्तर ही है। उनका निबंध साहित्य मुख्यत विचारात्मक है। वह तर्काधारित एव विवेक सवलित है। दिनकर एस निबंधकार हैं जिन्होन जिन विषयो को निबंध का आधार बनाया इनका विषय एव शैली दोनो दृष्टिया स सम्यक निर्वाह किया। दिनकर जी ने अपनी अपूर्व रचना सामर्थ्य से अनकानेक नवीन विषयो की ओर निबंधो के माध्यम स साहित्य ममज्ञो एव पाठको का ध्यान आकृष्ट करने का सफल प्रयास किया है। आपके सभी निबन्ध गहन चिंतन, मनन, प्रखर बौद्धिकता पाण्डित्य, सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति, सहृदयता और आस्थावान जीवन दृष्टि क परिचायक हैं। विषय की अतलस्पर्शी गहराई तक पहुचना दिनकर जी की प्रकृति है। निबन्धकार दिनकर के सम्यक मूल्यांकन हतु उनके निबन्धो का वर्गीकृत स्वरूप विवेचन आवश्यक है। दिनकर के समस्त निबन्धो का वर्गीकरण दो आधारो पर किया गया है। प्रथमत विषयानुसार और द्वितीयत शैलीगत वैशिष्ट्य के आधार पर।

(क) दिनकर के निबन्धो का विषयानुसार वर्गीकरण

निबन्धो क विषयानुसार वर्गीकरण को विद्वानो और समीक्षको न अत्यन्त दुष्कर[1], असम्भव[2] श्रमसाध्य[3] एव सवथा निरर्थक[4] कहा है। निबन्धकार विविधोन्मुखी रुचि का स्वामी होता है अतएव उसकी सरचना म विषय वविध्य स्वाभाविक है। दिनकर जी रुचि-वैविध्य क रचनाकार ह। अस्तु उनक निबन्धो

---

1 डा० माधुरी दुबे—हिन्दी गद्य का वैभव पृ० 100
2 डा० प्रभाकर माचव—हिन्दी निबन्ध, पृ० 16
3 डा० भोलानाथ—हिन्दी साहित्य पृ० 293
4 डा० लक्ष्मीनारायण सुधांशु (स०)—हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास (भाग 13)

का विषयानुसार वर्गीकरण निम्नाकित शीर्षको मे हो सकता है—

1 साहित्यिक निबन्ध
2 सास्कृतिक निबन्ध
3 राजनीतिक एव राष्ट्रीय चेतनापरक निबन्ध
4 सामाजिक निबन्ध
5 अन्य निबन्ध

साहित्यिक निबन्ध

इस कोटि मे उन निबन्धो की गणना होती है जो सृजनात्मक (मौलिक) होते है तथा समीक्षा के प्रतिमानो से अनुशासित होते हैं। प्रत्येक रचनाकार साहित्य के प्रति वैयक्तिक धारणा रखता है, उसकी निजी मान्यताए होती हैं। दिनकर जी मूलत सर्जक है, प्रकृति से कवि। अपनी साहित्य की यात्रा पर उन्होंने मौलिक चिंतन-प्रसूत निबन्धो की रचना की है। दिनकर विरचित निबन्ध अधिकाश साहित्यिक विषयो पर ही लिखित हैं।

साहित्यिक निबन्धो मे दिनकर के समीक्षक रचनाकार के अन्तस् की वेदना भी व्यजित हुई है। वे साहित्य को इस रूप मे लेते हैं—[1]

"साहित्य जीवन के अगो से रस ग्रहण करता है।"

"साहित्य स्वय जागरूक एव चैतन्य है।"

"साहित्य समाज एव धर्म को सही रास्ता दिखाता है।"

दिनकर साहित्य को युग का प्रतिबिम्ब मानते हैं। साथ ही वे स्वीकारते हैं कि रचनाकार वर्ण्य वस्तु के साथ आत्मीयता अनुभव करता है तथा प्रतिक्रिया भी व्यक्त करता है। 'प्रगतिवाद-समकालीनता की व्याख्या' निबन्ध मे वे लिखते हैं— "साहित्य का उद्देश्य प्रगतिशीलता है। साहित्य मे काव्य की प्रेरक शक्तिया फूलों, पहाड़ो, कलकल करते झरनो आदि म नही अपितु उस सामाजिक यथार्थ म हैं जो अपने सघर्षशील जीवन मे आगे बढना चाहता है।'[2] कला का सर्वोपरि धर्म सौन्दर्य है किन्तु सर्वोत्तम कलाकृति हम उसे कहते हैं जो सुन्दर होने के साथ-साथ सत्य भी हो और शिव भी।"[3] "कविता व्यक्ति और युग दोनो की चेतना का प्रस्वेद होती है।"[4] 'साहित्य जीतना ही शुद्ध, जितना ही तटस्थ, जितना ही

---

1 दिनकर—मिट्टी की ओर, 'साहित्य और राजनीति' निबन्ध
2 वही, पृ० 126
3 दिनकर—काव्य की भूमिका, पृ० 134
4 वही, पृ० 69

अप्रत्यक्ष होता है, उतना ही उसकी शक्ति और उज्ज्वलता में वृद्धि होती है।"[1]

साहित्य विषयक उक्त अवधारणाओं द्वारा दिनकर के सोच को अभिव्यक्ति मिली है। साथ ही दिनकर के समीक्षक का स्वरूप भी प्रकट करती हैं। साहित्यिक निबन्ध उनकी इस रचना दृष्टि का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। दिनकर के साहित्यिक निबन्धों में दो प्रकार के निबन्धों की परिगणना की जा सकती है। एक तो वे जिनकी वृत्ति सृजनात्मक है। जैसे—मन्दिर और राजभवन, दीपक की लौ अपनी ओर, हड्डी का चिराग कर्म और वाणी आदि।

द्वितीय वे जो सिद्धांतपरक साहित्यिक निबन्ध हैं। जैसे—कला में सोद्देश्यता का प्रश्न, काव्य समीक्षा का दिशा निर्देश, साहित्य और राजनीति, प्रयोगवाद, साहित्य में आधुनिकता बोध आदि। इस परिधि में दिनकर के समस्त साहित्यिक निबन्ध इस प्रकार हैं—

इतिहास के दृष्टिकोण से, दृश्य और अदृश्य का सेतु, हिन्दी कविता पर अशक्तता का दोष, वर्तमान कविता की प्रेरक शक्तियां, समकालीन सत्य से कविता का वियोग, हिन्दी कविता और छंद, बलिशाला ही मधुशाला, कवि श्री सियारामशरण गुप्त (मिट्टी की ओर) इन निबन्धों में दिनकर ने छायावादी कविता का मूल्यांकन किया है। साथ ही नई दिशा की ओर भी संकेत किया है जिस ओर कविता छायावादी केंचुल छोड़कर उन्मुख हो रही थी। मन्दिर और राजभवन, महाकाव्य की वेला, कविता का भविष्य, नयी कविता के उत्थान की रेखाएं, रजत और आलोक की कविता, गुप्त जी कवि के रूप में, कविवर मधुर, जार्ज रसल का साहित्यिक चिन्तन एवं कला के अर्धनारीश्वर (अर्धनारीश्वर) ये सिद्धांतमूलक साहित्यिक निबन्ध है जिनमें साहित्य के विभिन्न पक्षों का गंभीर चिंतन के परिप्रेक्ष्य में विवेचित किया गया है। हिम्मत और जिंदगी, चालीस की उम्र, ईर्ष्या तू न गई मेरे मन से, हृदय की राह, खड्ग और वीणा एवं विजय के आंसू (रेती के फूल)। इस संग्रह के निबन्ध अधिकांशतः सृजनात्मक है, जिनमें भाव एवं अनुभूति को प्रस्तुति मिली है। रीतिकाल का नया मूल्यांकन, छायावाद की भूमिका, छायावादोत्तर काल, प्रयोगवाद, कोमलता से कठोरता की ओर, भविष्य की कविता, प्रेरणा का स्वरूप, सत्य शिव सुन्दरम्, कविता ज्ञान है या आनन्द एवं कविता की परख (काव्य की भूमिका) ये निबन्ध समीक्षात्मक निबन्ध हैं। इनमें कवि सृजक दिनकर की विचार-दृष्टि एवं आलोचनात्मक सोच मुखर हुआ है। पुनरुत्थान के कवि मैथिलीशरण गुप्त, कामायनी दोष रहित, दूषण सहित एवं विचारक कवि पंत (पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण) यह 'काव्य की भूमिका' संग्रह का ही एक अंश के रूप में पृथक् से प्रकाशन है। इसमें प्रकृति की

---

1. दिनकर—शुद्ध कविता की खोज, पृ० 181

दृष्टि से भी 'काव्य की भूमिका' के समान सिद्धांतमूलक साहित्यिक मान्यताओं के निबन्ध संगृहीत हैं। मैथिल कोकिल विद्यापति, विद्यापति और ब्रजबुलि, महादेवी जी की वेदना एवं निर्गुण पंथ की सामाजिक पृष्ठभूमि (वेणुवन), पुण्य श्लोक जायसवाल जी, श्री राहुल सांकृत्यायन, प० बालकृष्ण नवीन, प० सुमित्रानन्दन पंत, मामा वरेरकर, रुक्मणि देवी और उनका कला चित्र, पोलैण्ड के राष्ट्रकवि, साहित्य का धर्म, आटी कला, महाकाव्य में सत्य और कल्पना एवं देश भाषा क्यों (वट-पीपल)। ये निबंध संस्मरणात्मक निबन्ध हैं। इनमें दिनकर का समीक्षक स्वरूप मुखर हुआ है। मनीषी और समाज, कला में व्यक्तित्व और चरित्र, कला का संन्यास (शुद्ध कविता की खोज), शीर्षक मुक्त चिंतन, आधुनिकता और भारत धर्म, शेक्सपीयर, कविता परिवेश और मूल्य, निराला जी को श्रद्धांजलि, मराठी के कवि केशव सुत, आधुनिकता का वरण, लेखकों का शिविर, महात्मा टालस्टाय, हिन्दी साहित्य में निगम धारा (साहित्यमुखी)।

उपर्युक्त निबंध दिनकर के निबन्धों की साहित्य विषयक सोच, रुझान एवं रुचि के द्योतक हैं। दिनकर ने इन निबन्धों में तटस्थ होकर साहित्य के स्वरूप, प्रेरणा शक्ति, इतिहास एवं भविष्य को ही रूपायित नहीं किया अपितु साहित्य से जुड़ी समस्याओं के प्रति मौलिक चिंतन-प्रसूत स्थापनाएं भी की हैं। उनकी ये स्थापनाएं एवं मान्यताएं प्रगतिशील चेतना की परिचायक हैं। दिनकर के साहित्य विषयक निबन्ध उनके गम्भीर, सूक्ष्म, व्यापक एवं सुदीर्घ चिंतन-मनन से अनुस्यूत हैं। इनके बल पर वे हिन्दी साहित्य को नई दिशा देने में सक्षम हुए हैं।

सांस्कृतिक निबन्ध

संस्कृति किसी भी देश, जाति या समाज का प्राणतत्त्व होती है। "संस्कृति एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति, जाति, समाज, राष्ट्र और विश्व जीवन के अन्तर बाह्य उत्थान का क्रम क्रियमाण रहता है। संस्कृति का सीधा सम्बन्ध मानवीय चेतना से है, जो युग जीवन के प्रभावों को आत्मसात करती हुई अभ्युत्थान मूलक किंवा ऊर्ध्वोन्मुख होता है।"[1] साहित्य मानवीय चेतना से जुड़ा है तथा समाज का प्रतिबिम्ब होने के कारण संस्कृति उसका जीवन-तत्त्व है। साहित्य की परिकल्पना संस्कृति के बिना असम्भव होती है क्योंकि संस्कृति में समाज, धर्म, राजनीति, दर्शन, न्याय, नीति, आदर्श सभी कुछ समाहित होता है। वस्तुतः साहित्य संस्कृतिमूलक ही होता है।

---

1 डॉ० देवीप्रसाद गुप्त—साहित्यिक निबन्ध ('महत् काव्य की सांस्कृतिक भूमिका' शीर्षक निबन्ध), पृ० 36

दिनकर के सम्पूर्ण साहित्य में संस्कृति को प्रमुख स्थान मिला है। भारतीय संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा के कारण उन्हें भारतीय संस्कृति के आख्याता की संज्ञा दी जाती है। दिनकर के निबन्धों में संस्कृति के विविध पक्षों का निरूपण मानवतावादी जीवन दर्शन के परिपार्श्व में हुआ है। दिनकर के निबन्धों में निरूपित सांस्कृतिक चिंतन से प्रसूत उद्भावनाएं इस प्रकार हैं—

(क) संस्कृति के प्रतीक महापुरुषों का उल्लेख एवं उनके दर्शन का अंकन।

(ख) प्राचीन परम्पराओं की रक्षा के साथ उनमें युगानुरूप परिवर्तन का समर्थन, संस्कृति के संदर्भ में व्यावहारिक जीवन दर्शन अपनाने का संदेश।

(ग) अन्य संस्कृतियों के गुणों को आत्मसात करने के प्रयासों का समर्थन।

(घ) उच्च सांस्कृतिक जीवन मूल्यों का समाहार के प्रति आग्रह।

दिनकर के निबन्धों में संस्कृति के प्रति सर्वत्र व्यापक एवं मानवीय दृष्टिकोण का परिचय मिलता है। अन्य संस्कृतियों के श्रेष्ठ गुणों को अंगीकृत करने को दिनकर 'संस्कृति' का कल्याण एवं प्राण कहते हैं— 'संस्कृति का स्वभाव है कि वह आदान प्रदान से बढ़ती है। जो जाति केवल देना ही जानती है, लेना कुछ नहीं जानती है उस संस्कृति का एक दिन दिवाला निकल जाता है। इसके विपरीत जिस जलाशय के पानी लाने वाले दरवाजे बराबर खुले रहते हैं, उसकी संस्कृति कभी नहीं सूखती। उसमें सदा ही स्वच्छ जल लहराता है, और कमल के फूल खिलते हैं। कूपमण्डूकता और दुनिया से रूठकर अलग बैठने का भाव संस्कृति को ले डूबता है।'[1] "आदान-प्रदान की प्रक्रिया संस्कृति की जान है और इसी के सहारे वह अपने को जिंदा रखती है।'[2] दिनकर जी जीवन के उदार और उदात्त गुणों में ही संस्कृति को निहित मानते हैं। संस्कृति के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण दिनकर के निबन्धों की विशेषता है। वे कहते हैं—"संस्कृति मनुष्य की आत्मा की चीज है। यह उसे भीतर से कोमल, दयालु और विनम्र बनाती है।"[3] इसी क्रम में आगे लिखते हैं -' संस्कृति सुख नहीं सदाचार है। संस्कृति ताकत नहीं विनम्रता है। संस्कृति संचय नहीं त्याग है। संस्कृति विजय नहीं मैत्री है। और सबसे बढ़कर संस्कृति की चरम साधना अहिंसा में प्रकट होती है।"[4] 'संस्कृति दुराग्रह नहीं सहनशीलता को कहते हैं। संस्कृति युद्ध को नहीं समझौते का नाम

---

1 दिनकर—रेती के फूल, पृ० 126-127

2 वही, पृ० 128

3 वट-पीपल, पृ० 64

4 वही, पृ० 67

है।"[1] दिनकर के निबन्धो मे सास्कृतिक पक्ष बडा उदात्त एव प्रेरणादायक है। उन्होंने युग बोध को ही सास्कृतिक धरातल पर प्रस्तुत किया है। दिनकर ने सस्कृति के मूल मे उन महापुरुषों को लेकर निबध रचे जिनसे सस्कृति परिभाषित होती है एव इसके स्वरूप का निर्धारण होता है। उन साहित्यकारो और उनकी कृतियो को लेकर भी निबन्ध रचे, जिन्होने सस्कृति को समझा एव सस्कृति को जानने-पहचानने की शक्ति दी।

दिनकर के सास्कृतिक निबन्धो मे भगवान बुद्ध, संस्कृति है क्या ? भारत एक है (रेती के फूल), शिक्षा के पाच लक्षण, हिन्दी साहित्य पर गाधीवाद का प्रभाव (साहित्यमुखी), सास्कृतिक सगम, बौद्धिक धर्म की व्यापकता, सस्कृति और सभ्यता (वेणुवन), चार सास्कृतिक क्रान्तिया, नया भारत कैसा, कबीर के सपने (वट-पीपल) उल्लेखनीय है।

दिनकर ने सास्कृतिक निबधो में सस्कृति के पारिभाषिक स्वरूप से लेकर उसके लाक्षणिक एव व्यवहृत स्वरूप तक को निरूपित किया गया है। इस विवेचन क्रम मे उनके सोच का केन्द्रबिन्दु भारतीय सस्कृति रही है। भारतीय सस्कृति की विशेषताओ को उजागर करना एव अन्य सस्कृतियों से उसकी तुलना करना भी दिनकर का लक्ष्य रहा है। इस विवेचना मे उत्कट राष्ट्रप्रेम दिनकर की चिंतन प्रक्रिया का सचालन सूत्र रहा है। अतएव भारतीय सस्कृति का गौरवगान उन्होंने सर्वत्र ही किया है। निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि दिनकर जी के निबधो मे सस्कृति के विविध पक्षो के चित्रण के साथ साथ उनके मानवतावादी दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति मिली है। दिनकर का सास्कृतिक चिन्तन भारतीयता से अनुप्राणित है।

राजनीतिक एव राष्ट्रीय चेतनापरक निबंध

राजनीति वर्तमान मानव जीवन का अविच्छिन्न अग है। रचनाकार समाज का सवेदनशील प्राणी होने के कारण उस पर राजनीतिक परिस्थितियो एव विचारधाराओ का प्रभाव पडना स्वाभाविक ही है। दिनकर इसके अपवाद नहीं हैं। उनके साहित्य में राजनीतिक चिंतन एव राष्ट्रीय चेतनापरक दृष्टि का निर्धारण भी युग के परिपार्श्व मे हुआ है। उन्होने मानवीय कल्याण को लक्षित कर युगानुकूल राजनीतिक आदर्शों की प्रस्थापना की है। दिनकर युग धर्म के समर्थक सचेत रचनाकार हैं। उनका आविर्भाव ऐसे मोड पर हुआ, जब सारा ससार विश्व राजनीति मे एक नये दौर से गुजर रहा था। भारत भी इस राजनीतिक उथल-पुथल मे सघर्षरत था—एक प्रगतिशील उन्नत समाज के निर्माणार्थ

1. वट-पीपल, पृ० 86

दिनकर के साहित्य मे विश्व राजनीति (पूजीवाद बनाम सर्वहारा वर्ग) एव भारतीय राजनीति की चेतना पूर्णरूपेण उभरी है। दिनकर ने जिन रचनाकारो (मैथिलीशरण गुप्त, इकबाल, माखनलाल चतुर्वेदी, नजरुल आदि) को साहित्यिक प्रेरणा के रूप मे ग्रहण किया, वे भी तत्कालीन राजनीतिक चेतना से प्रभावित हुए थे।

दिनकर जी साहित्य और राजनीति के परस्पर सबधो की गहराई को स्वीकारते हैं। उन्ही के शब्दो मे "यह तो प्रबुद्ध जीवन के आवेगमय अभियान का दृश्य है जिसके जुए मे साहित्य और राजनीति दोनो को अपनी गर्दनें लगानी पडती हैं।"[1] साहित्य और राजनीति के जीवन से यही सम्पृक्ति दोनो के सम्बन्धो की गहराई का कारण है। "राजनीति उस जीवन का एक अग है जो अपनी पूरी विविधता के साथ साहित्य की व्याख्या का विषय होता है। जिस प्रकार साहित्य जीवन के अन्य अगो से रसानुभूति प्राप्त करता है उसी प्रकार राजनीति से भी वह रस ग्रहण करता है।"[2] युग सत्य के प्रभावो से अपने को पूरी तरह विलग कर पाना सचेत और सवेदनशील रचनाकार के लिए असम्भव है। दिनकर के ही शब्दो मे—"आदमी कलाकार उतनी ही देर है, जितनी देर वह कला की रचना मे लगा हुआ है। रचना से छूटकर विवेचना मे पडते ही वह कुछ-न-कुछ राजनीति करने लगता है अथवा यो कहे कि अनजाने ही राजनीति की पकड मे चला जाता है।"[3] कलाकार और राजनीतिज्ञ दोनो का लक्ष्य सर्व कल्याण है।[4] सत्य और शिव राजनीति के भी उपकरण है तथा साहित्य के भी। साहित्य जीवन की सम्पूर्णता को तलाशता है तो राजनीति उसकी इकाई मात्र है। "साहित्य राजनीति का अनुचर नही बनता अपितु उससे गौरव प्राप्त करता है। राजनीति साहित्य की द्रोही नही, उसके पास ही बहने वाली एक भिन्न धारा है। जब वह साहित्य की धारा से आकर मिलती है, उसका अपना रूप विलीन हो जाता है।"[5] दिनकर साहित्य को राजनीति के प्रचार का हथियार नही मानते, क्योकि साहित्य के अपने मानदण्ड एव आदर्श है जिनकी परिधि व्यापक होती है। अत साहित्य राजनीति का प्रचार करे यह न तो सभव है और न उचित ही।[6] यदि साहित्य को राजनीति का प्रसारक बनाया जाए तो—"उस उद्देश्य की सिद्धि दुर्लभ

---

1. दिनकर—मिट्टी की ओर, पृ० 106
2 वही पृ० 126
3 दिनकर—बट-पीपल, पृ० 121
4. मिट्टी की ओर, पृ० 55
5 वही, पृ० 142
6 दिनकर—मिट्टी की ओर, पृ० 54

होगी, जिसके लिए साहित्य की आवश्यकता है।"[1] दिनकर साम्यवाद एव गाधीवाद से प्रभूतत प्रभावित रहे हैं। ये समाज की प्रगति मे दोनो की सम्मिलित भूमिका को महत्त्व देते हैं। समीक्ष्य निबन्धो मे उनके दृष्टिकोण पर यह प्रभाव भली भाति देखा जा सकता है।

दिनकर के राजनीतिक चिन्तन विषयक निबन्ध हैं—साहित्य और राजनीति, *नेता नहीं नागरिक चाहिए, शांति की समस्या, जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि* गरीयसी, हिन्दी साहित्य पर गाधीवाद का प्रभाव एव प्रगतिवाद। इन निबन्धो मे साहित्य के बहाने गाधी एव मार्क्स के सिद्धान्तो का मूल्याकन भारत के सदर्भ मे किया गया है। राजनीतिक मूल्यो का सधान भी इन निबन्धो का लक्ष्य रहा है। आधुनिक युग मे राष्ट्रीयता का उद्घोष करने वाले साहित्यकारो मे दिनकर का नाम सर्वोपरि है। उनके राजनीति विषयक विचार भी राष्ट्रीयता पर अवलबित हैं। दिनकर मे भारत के प्रति तीव्र एव गहन अपनत्व एव ममत्व का भाव विद्यमान है। उनका साहित्य राष्ट्रीयता का वह मत्रोच्चार करता है, जो जन हृदय मे एकता एव सर्व-कल्याण का भाव उद्बुद्ध कर सके।

दिनकर के राष्ट्रीय चेतना परक निबन्धो मे प्रमुख हैं—क्या रवीन्द्र अभारतीय हैं? कला के अर्धनारीश्वर, राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता, हिन्दी कविता मे एकता का प्रवाह, भारत एक है, पुनरुत्थान के कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त, देश भाषा क्यो? राष्ट्र भाषा और राष्ट्रीय एकता एव युद्ध और कविता।

सामाजिक निबध

दिनकर उतोन्मुखी प्रगतिशील चेतना के रचनाकार हैं। वे 'कला जीवन के लिए' सिद्धान्त के पक्षधर हैं। उनका निबन्ध साहित्य राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ सामाजिक चेतना से भी अनुस्यूत है। समसामयिक परिस्थितियो के परिपार्श्व मे सामाजिक जीवन के विविध प्रश्नो का विवेकसम्मत प्रस्तुतीकरण एव समुचित समाधान उनके निबधो के विषय रहे हैं। दिनकर के निबध साहित्य मे सामाजिक चिन्तन के निम्नाकित आयाम परिलक्षित होते हैं—

1 सामाजिक शोषण का विरोध
2 जातिगत भेदभाव का निषेध
3 साम्प्रदायिकता के प्रति विद्रोह
4 वर्गहीन समतावादी समाज की प्रतिष्ठा का आग्रह।

दिनकर का आविर्भाव अगरेजी-शासन काल मे हुआ। वह काल राजनीतिक उथल पुथल का था। दिनकर मे राष्ट्रप्रेम कूट कूटकर भरा था, आक्रोश पूर्ण

---

1 दिनकर—अर्धनारीश्वर, पृ॰ 101

वाणी में रूढ़ियों, शोषण, वैषम्य एवं भेदभाव का वे विरोध करते रहे। यथा—"हम प्रकाश चाहते हैं, परम्परा की तमिस्रा को छिन्न-भिन्न कर देने वाले विभा-विभाओं से सवलित ज्ञान का प्रकाश, रूढ़ियों के जाल पर ज्वाला पात करने वाला उद्धारक प्रकाश, मनुष्य-मनुष्य के बीच जो नैसर्गिक सम्बन्ध है, उसे प्रत्यक्ष रूप से दिखलाने वाला समत्व विधायक प्रकाश।"[1] दिनकर का यह आक्रोश उनके समस्त साहित्य में विद्यमान है। आक्रोश के परिणामस्वरूप उनके भाव भी क्रांतिकारी हो गए। उनके निबंधों के विषय नारी विषयक हो या समाज चेतना-परक, सर्वत्र क्रांति का उद्घोष सुनाई देता है।

उनके नारी चेतना विषयक कई निबन्धों में लेखक की दृष्टि नारी के प्रति उदात्त भाव से पूर्ण रही है। उन्होंने समाज की हर कुरीति की जड़ तक पहुंचकर एक शोषणविहीन आदर्श समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। सामाजिक विषमताओं के मूल में वे मानव के अहंकार को प्रमुख मानते हैं—"सामाजिक विषमताओं के मूल में मानव का अहंकार निवास करता है। जाति का अहंकार, वंश का अहंकार, धन और शक्ति का अहंकार, सिद्धि और सफलता का अहंकार। ये सभी अहंकार विभाजक रेखाएं हैं, जो मनुष्य को मनुष्य से अलग करती हैं।"[2] उनकी श्रेष्ठ समाज की धारणा इस प्रकार है—"श्रेष्ठ समाज वही है, जिसके सदस्य ज्ञान और कर्म में से एक को श्रेष्ठ और दूसरे को अधम नहीं मानते। श्रेष्ठ समाज वह है, जिसके सदस्य जी तोड़कर श्रम करते हैं, तब भी जरूरत से अधिक धन पर अधिकार जमाने की उनकी इच्छा नहीं होती।"[3] दिनकर के सामाजिक चिन्तन का स्वर हमन की इन्निहा बनाम, कर्मी और समाज, समाजवाद के अंदर साहित्य, गांधी व मार्क्स की परिणति, लेखक की दृष्टि से नारी शीर्षक निबन्धों में मुखर हुआ है।

अन्य निबन्ध

इस वर्ग में दिनकर के वे निबन्ध वर्गीकृत हैं जो अन्य वर्गों में नहीं उल्लिखित हुए हैं। ऐसे निबन्धों में विज्ञान (कविता, राजनीति और विज्ञान), धर्म विषयक (कला धर्म और विज्ञान, बौद्ध धर्म की विजय व्याख्या, आधुनिकता एवं भारत धर्म), मनोविज्ञान (ईर्ष्या तू न गई मेरे मन से) विषयक निबन्ध उल्लेखनीय हैं। दिनकर का गम्भीर चिन्तन, सूक्ष्म दृष्टि, व्यापक व्याख्या, भावतीव्रता का आदर, दार्शनिकता एवं प्रखर विचारशीलता इस कोटि के सभी निबन्धों में परिलक्षित किए जा सकते हैं।

---

1 दिनकर—अर्धनारीश्वर, पृ० 5
2 दिनकर—वेणुवन, पृ० 41
3 वही, पृ० 43

शैलीगत वर्गीकरण

विचारात्मक निवन्ध

जिन निवन्धों मे बुद्धि तत्त्व की प्रधानता एवं विचार का प्रतिपादन होता है, वे 'विचारात्मक निवन्ध' की संज्ञा पाते हैं। इस प्रकार के निवन्धो के लिए गभीर अध्ययन, चिंतन-मनन एव स्वानुभूत सत्य की आवश्यकता होती है। रचनाकार इस प्रकार के निवन्धों मे नवीन जीवन-दृष्टि एव विचार-दर्शन को प्रस्तुति देता है। इसमें कुछ आधारभूत सिद्धान्तो के आधार पर विचारो को अभिव्यक्त किया जाता है। तर्कभावना एव अनुभूति का अवलम्ब इन विचारो को ग्रहणीय बनाता है। विचारात्मक निवन्धो मे निम्नाकित विशेषताए पायी जाती है—

1. बुद्धि तत्त्व की प्रमुखता
2. विचारो की सुगुम्फित एव सतुलित अभिव्यक्ति
3. तार्किकता एव वैज्ञानिकता का समावेश
4. भाषा मे प्रतीकात्मकता
5. समास शैली का प्रयोग।

दिनकर जी ने अधिकाशत: विचारात्मक निवन्ध लिखे हैं। उनके विचारो मे निर्भीकता एव स्वच्छन्दता है। भाषा और विचारो की कसावट, सक्षिप्तता तथा प्रतिभा का सुष्ठु समन्वय दिनकर के विचारात्मक निवन्धो मे सर्वत्र लक्षित होता है। उनका महिमा मण्डित प्रवन्धकार व्यक्तित्व निवन्धो मे स्पष्टत परिलक्षित होता है। भाषा का सहज, सरस, स्वाभाविक प्रयोग निवन्धो को सम्प्रेषणीयता से युक्त करता है। एक समीक्षक के शब्दो मे—"विचारो के सहज समन्वय द्वारा उनके निवन्ध पाठक की बुद्धि को प्रेरित और हृदय को रससिक्त करते है। उनके निवन्धो मे स्वच्छता, सरलता और आडम्बरहीनता का समर्थन मिलता है। ये गुण निवन्ध को पूर्ण और आकर्षक बनाते है।"[1]

दिनकर के विचारात्मक निवन्धो मे तर्क-शक्ति का सम्बल है, फलत वे पाठक को उद्बुद्ध करके विचार मथन हेतु विवश करते हैं। उदाहरणार्थ कतिपय निवन्धाश द्रष्टव्य है—

(क) "जिस दिन वैयक्तिकता समाप्त हो जाएगी, उसी दिन साहित्य मे नवीनता भी समाप्त हो जाएगी।"[2]

(ख) "सत्य शिव और सुन्दर मे से प्रत्येक तत्त्व अपने भीतर बाकी दो तत्त्वो का निचोड लिए हुए है। मगर यह अनुभूति तभी आती है जब मनुष्य

---

1. डॉ० सुशीला मिश्रा—दिनकर की साहित्य दृष्टि, पृ० 334
2. दिनकर—मिट्टी की ओर, पृ० 14

का जीवन ऊंचा हो जाय, जब बाहरी भेदो को चीरकर वह उस जगह पहुच जाये जहा जीवन और कल्पना, शब्द और विश्वास तथा विश्वास और कर्म मे कोई भेद नही रह जाता।"[1]

(ग) "जो लोग वर्तमान के द्रोही और भविष्य के अंध भक्त हैं, उनकी स्थिति यह होगी कि वर्तमान का जीवित अंश भविष्य मे उनका विरोधी रहेगा।"[2]

(घ) "आदान-प्रदान-प्रक्रिया संस्कृति की जान है और इसी के सहारे वह अपने को जिन्दा रखती है।"[3]

दिनकर जी ने तर्कसंगत एव धारदार तथ्य निबन्धो मे प्रस्तुत किये हैं। यथा—

"नवीन युग की सभी क्रांतिया पहले मनीषियो के दिमाग मे सुलगी थी, पीछे उनकी लपेट मे जनता भी आ गई। स्थापित समाज के विरुद्ध यदि मनीषियो के मन मे असन्तोष नही है तो वह समाज नही टूटेगा। लेकिन यदि मनीषी उसके विरुद्ध है तो उस समाज को आज नही तो कल बदलना पडेगा। मनीषी वह सरल, निश्छल यन्त्र है, जिसके भीतर जनता की छाती धडकती है, सभ्यता और संस्कृति के हृदय के स्पन्दन सुनाई देते है और जन जन के मन की पीडाए बोलती हैं।"[4]

दिनकर जी के कुछ विचारात्मक निबन्धो मे उनका प्रगतिशील चिंतन भी मुखर हुआ है। यथा—

"कर्म के अभाव मे चिंतन दु खदायी हो जाता है। जो अप्रतिबद्ध हैं, वह अपनी स्वतन्त्रता को इस उद्देश्य से बचाए फिरता है कि श्रम के पास जाने से कही स्वतन्त्रता मलिन न हो जाए किन्तु मनुष्य की महिमा प्रतिबद्ध होने मे देखी जाती है, दायित्व और खतरो का सामना करने मे परखी जा सकती है।"[5]

'समाजवाद के अन्दर साहित्य'[6] साक्षात्कार की मुद्रा मे लिखा गया निबंध है, जिसमे वे समाज, संस्कृति और साहित्य के अस्तित्व, भूमिका और भविष्य के लिए चिंतित दिखाई देते है। 'गाधी से मार्क्स की परिस्फूर्ति'[7] मे व्यक्ति और

1 दिनकर—रेती के फूल, पृ० 60
2 वही, पृ० 76
3 वही, पृ० 128
4 दिनकर—शुद्ध कविता की खोज, पृ० 169
5 वही, पृ० 209
6 दिनकर—अर्धनारीश्वर, पृ० 76
7 वही, पृ० 105

समाज के आदर्श की खोज की गई है। प्रश्नात्मक मुद्रा में निबंध का अंत दिनकर की निबंध शैली की उल्लेखनीय विशेषता है। इसके कारण निबन्ध पठन के पश्चात् भी पाठक की भूमिका समाप्त नहीं होती है अपितु वह समानान्तर रूप से चिंतन में लीन हो जाता है। उक्त दोनों निबंधों में इस शैली को देखा जा सकता है। दिनकर की भाषा यहां एकदम सहज है। वे अपनी रचना सामर्थ्य से दुरूह विषयों को भी सरल ढंग से प्रस्तुति दे पाते हैं। 'रवीन्द्र जयन्ती के दिन' निबंध का उद्धरण द्रष्टव्य है—

"*सभ्यता के समस्त रोगों का निदान यह है कि मनुष्य ने हृदय की उपेक्षा* करके मस्तिष्क की आवश्यकता से अधिक आराधना की है। जब तक हृदय का आसन मस्तिष्क की ऊंचाई तक नहीं पहुंचेगा, तब तक संसार यों ही दग्ध होता रहेगा।"[1] 'साहित्य में आधुनिकता' निबंध में आधुनिकता के संदर्भों में विचार के स्तर पर उजागर किया गया है—"*जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, यह एक* प्रक्रिया का नाम है। यह प्रक्रिया अन्धविश्वास से निकलने की प्रक्रिया है। आधुनिकता कोई मूल्य नहीं, बल्कि अत्याधुनिक कवि और लेखक जो कुछ लिखते हैं, उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि वह मूल्यों के विघटन का पर्याय है।"[2]

दिनकर जी विचारों की अभिव्यक्ति में निर्भीकता के पक्षधर दृष्टिगोचर होते हैं। वे इस बात की कतई परवाह नहीं करते कि उनके दृष्टिकोण से कोई सहमत होगा या नहीं, किन्तु उनके तर्क गम्भीर चिंतन प्रसूत है। उनकी सरल विश्लेषणात्मक शैली प्रभावित किए बिना नहीं रहती। उनके निबंधों में बौद्धिकता का समावेश बोझिलता का कारण बन नहीं पाता है। विषय विविधता, स्वतंत्र-चिंतन, मौलिक स्थापनाएं दिनकर के निबन्धों की शक्ति है। उनके उल्लेखनीय विचारात्मक निबंध इस प्रकार है—कला धर्म और विज्ञान, संस्कृति है क्या, भविष्य के लिए लिखने की बात, मंदिर और राजभवन, कला, राजनीति और विज्ञान, कला का सन्यास, प्रेरणा का स्वरूप, सत्यं शिवं सुन्दरम्, आधुनिकता का वरण, युद्ध और कविता, संस्कृति संगम, शांति की समस्या, संस्कृति और सभ्यता, नया भारत कैसा हो, विज्ञान की सीमाएं, देश भाषा क्यों, साहित्य का धर्म, कला की सोद्देश्यता का प्रश्न, साहित्य और राजनीति आदि।

भावात्मक निबन्ध

भावात्मक निबन्धों का सम्बन्ध भाव प्रधान विवेचना से होता है। इनमें

---

1. अर्धनारीश्वर, पृ० 149
2. साहित्यमुखी, पृ० 173

भावो की प्रधानता तथा बुद्धि के स्थान पर रागात्मक तत्त्व की प्रमुखता होती है। 'भावात्मक निबंध का लेखक अपनी भावुकतापूर्ण मर्मस्पर्शी सजीव भाषा-शैली और भावानुकूल उमंग उतार-चढाव की सहायता से पाठक को पर्याप्त प्रभावित करता है। लेखक की अनुभूति-तन्मयता उसके रागात्मक कथन को प्रभावशाली बनाती है और उसकी सत्यता पर बल देती है।"[1] वस्तुत हृदय की स्वच्छन्द उड़ान, कल्पना का विस्तृत अवकाश और भावनाओ की तीव्रता इन निबन्धो के प्रमुख लक्षण है। भावात्मक निबन्धों की विशेषताए इस प्रकार है—

1 अन्य तत्त्वो की अपेक्षा रागात्मकता प्रमुख रहती हैं।
2 हृदय की निश्छलता एव स्वच्छन्दता इनका प्रमुख लक्षण है।
3 अन्तरानुभूतियो एव तीव्र भावो का सच्चा चित्रण होता है।
4 प्रवाह, तरग एव प्रलाप शैलिया इन निबंधो मे उपयुक्त मानी गई हैं।
5 सरस, कोमल शब्दावली का प्रयोग इन निबंधो की भाषा की प्रवृत्ति है।

स्वभाव, प्रकृति मनोविकार, सुख दुखात्मक स्थितिया की प्रतिक्रियात्मक व्यजना सम्बन्धी निबन्धो म उक्त गुण समाहित होते है।

दिनकर ने भावात्मक निबन्ध परिमाण की दृष्टि से कम किंतु महत्वपूर्ण निबन्ध सृजित किए है। हिम्मत और जिन्दगी, चालीस की उम्र, हृदय की राह, ईर्ष्या तू न गयी मेरे मन से, खड्ग और वीणा, विजय के आसू, तुम घर कब आओगे कवि, दीपक की लौ अपनी ओर, हड्डी और विराग, कविता का भविष्य, नेता नही नागरिक चाहिए, और चाहिए किरण जगत को और चाहिए चिंगारी स्वतत्र रूप से भावात्मक निबंध के अतर्गत रखे जा सकते है। इन निबन्धो मे विचारात्मक निबन्धो की अपेक्षा कल्पना की प्रधानता है। इन निबन्धो मे काव्यात्मकता का आनद आता है। व स्वीकारते है कि—"एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य तक जाने की जितनी पगडण्डिया है, उनमे बुद्धि की पगडण्डी सबसे कठिन और हृदय का रास्ता सबसे आसान है।[2] आत्मीयता, लालित्य एव निजता दिनकर के भावात्मक निबन्धो की उल्लेखनीय विशेषताए है। 'चालीस की उम्र' इसका अच्छा उदाहरण है। यथा—

'कहते है—जवानी शरीर मे नही, शरीर के भीतर कही दिलमे रहती है। भीतर से फूटने वाला उमगो का फव्वारा जिनका ताजा और जवान है, वे उम्र के

1 डॉ० गगाप्रसाद गुप्त—हिंदी साहित्य म निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 15-16

2 रेती के फूल, पृ० 26

उतार के मौसिम मे भी जवान रहते है फिर भी जो लोग उम्र की चोटी पर उमगो के साथ उतर रहे है वे भी अगर अपने आपसे तटस्थ सोचे तो उन्हे पता चलेगा कि यह जवानी केवल मन की जवानी है।"[1]

"मैंने उम्र की तलवार मे कट कितने ही लोगो को झीखते देखा है। लेकिन यह झीखना किस काम का ? दोपहरी को ऊषा बनाना कठिन है और फिक्र करने से तो दोपहरी और भी तेजी से ढलने लगेगी। समय रुकने का नही। जरूरत है समय के साथ बदलने की।"[2]

व्यग्य को दिनकर ने भावात्मक निबन्धो म महत्त्व दिया है। यथा—"ईर्ष्या का यही अनोखा वरदान है। जिस मनुष्य के घर मे ईर्ष्या घर कर लेती है, वह उन चीजो से आनन्द नही लेता जो उसके पास मौजूद हैं, बल्कि उन वस्तुओ से दुख उठाता है जो दूसरो के पास है।"[3]

यहा चित्रात्मक भाषा का उद्धरण द्रष्टव्य है जो भाव और भाषा की दृष्टि से गरिमापूर्ण है—"आज हिमालय की गुहा मे भीषण अधकार का साम्राज्य है। सूर्य, चन्द्र और कितने ही उपग्रह पराजय स्वीकार करके क्षितिज के पार उतर गए। सत्ता दीखती है तो उल्कापात की, जो अधकार को भी डरावना बना रहे हैं।' ऐसा लगता है कि हमारा राष्ट्रीय जीवन ही शिथिल और विजडित हो गया है।"[4] मानसिक विचारो की लहरो पर नृत्य की मुद्रा मे भावो का प्रवाह दिनकर के निबधो मे देखते ही बनता है—'मनुष्य के भीतर कोई मनुष्य होता है जो अभावो मे भी सतुष्ट और समृद्धियो के बीच भूख से व्याकुल रहता है। उसका आहार रोटी और दाल नही, बल्कि फूल, नदी, पर्वत, भाव और विचारो का सौंदर्य है।"[5]

निष्कर्षत कहा जा सकता है कि दिनकर के भावात्मक निबन्धो का आधार आत्म सौंदर्य की अभिव्यक्ति है। उनके निबन्धो मे कोरी भावुकता के स्थान पर विचारोन्मुख राग तत्त्व के दर्शन होते है।

विवरणात्मक निबन्ध

विवरणात्मक निबध वे है जिनमे किसी ऐतिहासिक वृत्त, कथा अथवा घटना का विस्तृत विवरण हो। इसमे काल का महत्त्व रहता है। इसमे व्यक्तित्व की

1 रेती के फूल, पृ० 7
2 वही, पृ० 10
3 वही, पृ० 16
4 अर्धनारीश्वर, पृ० 10
5. वही, पृ० 27

छाप एवं आत्मीयता प्रमुख होती है। कल्पना एवं अनुभूति के सहारे रचनाकार क्रियाशील व्यक्तित्व का आकलन करता है तथा रागात्मकता का संस्पर्श इस प्रकार के निबंधों की अनिवार्यता है। घटनाक्रम सुगुम्फित रहते है। इतिहास एवं विवरणात्मक निबन्ध मे मूलभूत अंतर यह है कि इतिहास का सम्बन्ध वाह्य तत्त्व से है तथा निबन्ध का अन्तर मे। सर्जक इसमे तटस्थ रहकर आत्मीयता के साथ वर्णन प्रस्तुत करता है। यात्रा, संस्मरण, जीवनी, शिकार इत्यादि विषयक रचनाएं भी इसी कोटि मे आती है।

शुक्लोत्तर निबंध साहित्य मे विवरणात्मक निबन्ध पूर्वापेक्षया कम लिखे गये है। विचारात्मक निबंधो का इस युग मे प्राधान्य रहा है। दिनकर युग स्रष्टा एवं द्रष्टा रचनाकार है, उन्होने भावात्मक एवं विचारात्मक निबंध ही अधिक लिखे है, तथापि जिन निबंधो मे युगीन व्यक्तित्वो के सांस्कृतिक आकलन मे घटनाक्रम, उनका प्रतिफल, व्याख्या, उदाहरण मिलते है, विवरणात्मक बन गये हैं। कर्म और वीणा, भगवान बुद्ध, रजत आलोक की कविता, कविवर मधुर, स्वतंत्रता के बाद, पाकिस्तान के पीछे साहित्य की प्रेरणा, बलिशाला हो मधुशाला, निराला जी को श्रद्धांजलि, महात्मा टालस्टाय, मैथिल कोकिल विद्यापति, लेखक की दृष्टि मे नारी, आर्ट कला, मामा वरेरकर, प० सुमित्रानन्दन पंत, एक कविता की जन्मकथा, भारत एक है निबन्धो मे विवरणात्मकता उपलब्ध होती है।

दिनकर की काव्यात्मक, अनुभूतिपरक स्थलो के अनेक दृश्य विवरणात्मक निबन्धो की कलात्मक विशेषता है। भाषा मे प्रसाद गुण एवं आवेश शैली का प्रयोग उनके निबन्धो को सजीव स्वरूप प्रदान करता है। कुछ उद्धरण द्रष्टव्य है—

(क) "1919 ई० मे गाधी जी और रवि बाबू के बीच जो चख-चख चली वह प्रकारान्तर से, कर्म और वाणी के इसी सनातन संघर्ष का परिणाम थी। इस बार वाणी जूटी जरा डटकर, मगर सिद्ध यह हुआ कि वाणी के मुकाबले मे हथौडा ही नही, चरखे का तकुआ भी काफी बलवान है। आश्चर्य है कि जागरण की ज्योति तो कर्म और वाणी दोनो ही भूमियो मे एक साथ चमकी, मगर कर्म आगे बढता गया और वाणी धीरे-धीरे स्वप्न नीड़ मे फिर से समाविष्ट हो गई।"[1]

(ख) "बालमुकुन्द गुप्त भारतेन्दु के सच्चे वारिसों मे से थे। उनके पद्यो मे सौंदर्य चित्रण कम, समय के चित्रण का प्रयास अधिक है। उनका काव्य काल कांग्रेस के जन्म के तीन-चार साल बाद मे प्रारम्भ होता है। अतएव हम देखते हैं वे भारतेन्दु की तरह सावधान रहकर सजग नही

1. रेती के फूल, पृ० 31

करते बल्कि उन्हे जो कुछ कहना है, उसे बडी निर्भीकता से कह जाते हैं।"[1]

(ग) "रवीन्द्रनाथ हमारे राष्ट्रीय कवि हैं क्योंकि उन्होंने भारतवर्ष की आत्मा के गौरव की जैसी व्याख्या की वैसी पहले और किसी ने भी नहीं की थी। उनका महत्त्व इसलिए भी बढ जाता है कि वे ऐसे समय उत्पन्न हुए जबकि भारतवर्ष को एक ऐसे व्याख्याता की आवश्यकता जान पड़ी थी, जिसकी वाणी के सदेश को स्वदेश ही नही, विदेश भी समझे।"[2]

दिनकर के विवरणात्मक निबधो में जहां व्याख्यात्मकता, तुलना, घटनात्मकता, विचारात्मकता मिलती है, वही कल्पना एव भाव-विचार समन्वय भी। दिनकर जी के विवरणात्मक निबधो में तथ्यपरक विश्वसनीयता आद्यत विद्यमान है।

समीक्षात्मक निबन्ध

जिन निबन्धो मे साहित्यालोचन की प्रधानता हो, वे समीक्षात्मक निबन्ध कहलाते हैं। समीक्षात्मक निबन्धो मे आत्मीयता एव वैयक्तिकता का अभाव होता है। समीक्षात्मक निबन्धो मे रचनाकार की आलोचना दृष्टि मे विषय के साथ तादात्म्य की इच्छा विद्यमान रहती है। सर्जक के मताग्रह एव दृष्टि की प्रधानता रहती है। दिनकर के समीक्षात्मक निबन्ध परिमाण की दृष्टि से विपुल मात्रा में है। इनमे दिनकर की प्रगतिशील रचना दृष्टि एव युगीन अनुचिंतन उजागर हुआ है। 'काव्य की भूमिका' एवं 'पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण' उनके समीक्षात्मक निबधो की ही पुस्तके है। इसके अतिरिक्त कविता मे दुरूहता, जार्ज रसल का साहित्य चिंतन, महर्षि अरविन्द की साहित्य साधना, मराठी कवि केशव सुत और समकालीन हिंदी कविता, हिंदी साहित्य पर गाधीवाद का प्रभाव, साहित्य में आधुनिकता, विद्यापति और ब्रजबुलि, महादेवी की वेदना, कबीर के स्वप्न आदि निबन्ध समीक्षात्मक प्रवृत्ति के है। इन निबधो मे दिनकर की चिंतनपरक समीक्षा दृष्टि उभरी है। इसके अतिरिक्त समीक्ष्य निबधो मे दो प्रवृत्तियां आधारभूत रूप मे मुखर है—एक सौदर्यवादी दृष्टि और दूसरी राष्ट्रीयतापरक विचारणा। भावनाओं और विचारो का समन्वय उनके पाठक की बुद्धि एव भावना को झकृत करते हैं। इन निबधो मे पाण्डित्य प्रदर्शित न करके साहित्य के विविध पक्षो, रचनाओं और रचनाकारो का मूल्याकन कर उन्हे सहज ग्राह्य

1. अर्धनारीश्वर, पृ० 112
2. वही, पृ० 160

रूप में प्रस्तुत किया गया है। आत्मीयता एवं वैयक्तिकता इन समीक्षाओं को निबंध की आस्था प्रदान करती है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् सहज ही कहा जा सकता है कि दिनकर का विपुल परिमाण युक्त निबंध साहित्य सशक्त एवं विरल है। विषय की विविधता, भाव और विचार का समन्वय एवं मौलिकता, भाषा की प्रौढ़ता एवं सरसता, शैली की अभिनवता उनकी निबंध साहित्य में भी पहचान बनाने में सहायक हुई है। मूलत दिनकर जी की वृत्ति विचारात्मक एवं समीक्षात्मक निबंधो में रमी है किंतु भावात्मक एवं विवरणात्मक निबंध सरचना में भी उनकी रचना सामर्थ्यवान रूप में उजागर हुई है। इस दृष्टि से उन्हें समर्थ निबंधकार कहा जाये तो अनुचित न होगा।

4

दिनकर के निबंध साहित्य का शैलीगत वैशिष्ट्य

"Style is man Itself."[1] के अनुसार शैली व्यक्तित्व की पहचान का मुख्य उपादान है। निबंध के संदर्भ में यह उक्ति और भी महत्त्वपूर्ण है, शैली वैशिष्ट्य ही निबन्धकार का परिचय स्वयमेव करा देता है। शैली वस्तुतः रचनाकार की निजता की पहचान होने के साथ-साथ रचना की शक्ति भी होती है। हिन्दी का 'शैली' शब्द अंगरेजी के 'स्टाइल'(Style जो लैटिन शब्द Stipus लोह लेखनी से व्युत्पन्न है) के लिए प्रयुक्त होता है। समकालीन साहित्यशास्त्र में शैली सम्बन्धित विचारणा 'स्टाइल' के परिप्रेक्ष्य में ही विकसित हुई है। अंगरेजी में 'स्टाइल' शब्द बहुआयामी अर्थों को व्यक्त करता है। यथा—

1. धातु निर्मित वह नुकीला उपकरण जो धातु या तांबे के पत्रों पर चित्र बनाने के काम में आता है।
2. अभिनय, नाच खेने, गाने, चलने-फिरने, घुड़सवारी आदि जीवन-क्रिया की विशिष्ट पद्धति।
3. सजना-धजना एवं विशिष्ट अंदाज।
4. किसी को सम्बोधित करने की विधि या विशिष्टता सूचक उपाधि।
5. सुन्दर रूपाकार और मस्ती भरा व्यवहार।
6. लिखने या बोलने में भावाभिव्यक्ति की पद्धति।
7. भावाभिव्यक्ति की सुन्दर पद्धति।[2]

---

1. उद्धृत—द न्यू डिक्शनरी आफ थाट, बुफो का कथन
2. डा० राघव प्रकाश—शैली विज्ञान और पाश्चात्य एवं भारतीय साहित्य शास्त्र, पृ० 13-14

'पद्धति', अंदाज', 'विशिष्ट भंगिमा' का अर्थ बोध उपर्युक्त जीवन क्रियाओं में समान रूप से विद्यमान है। साहित्य शास्त्र में 'स्टाइल' लिखने-बोलने में भावाभिव्यक्ति की विशिष्ट पद्धति के रूप में प्रयुक्त हुआ है। भारतीय साहित्य शास्त्र में अभिव्यंजना हेतु रीति, वृत्ति, मार्ग, संघटना आदि अनेक शब्द प्रचलित रहे हैं। आचार्य वामन ने 'विशिष्ट पद रचना'[1] को रीति कहा है, तो भरतमुनि 'प्रवृत्ति' शब्द का प्रयोग करते हैं—नाना देश वेश भाषाचार वार्ता, ख्यापयनीति प्रवृत्ति।[2] बाणभट्ट 'भाषा रूप'[3] को रीति कहते हैं तो दण्डी ने मार्ग[4] शब्द का प्रयोग किया है। आनन्दवर्धन ने संगठन[5] राजशेखर ने 'वचन विन्यास क्रम', मम्मट ने 'नियत वर्ण व्यापार'[6] आदि शब्दों का प्रयोग किया है। वस्तुतः संस्कृत साहित्य शास्त्र में पद रचना की रीति ही शैली का द्योतक है।

'शैली' शब्द 'शील' से बना है। 'शैली' शब्द का प्रयोग भारतीय वाङ्मय में प्राचीन काल से होता रहा है। महर्षि पातंजलि ने महाभाष्य में 'शैली' शब्द का प्रयोग दूसरी सदी ईसवी पूर्व में किया है—

"एषा हि आचार्यस्य शैली लक्ष्यति।"[7]

11 वीं सदी में प्रदीपकार कय्यट कहते हैं—'शीले स्वभावे भव्या वृत्ति शैली। 13वीं सदी में 'मुग्धबोध व्याकरण' के टीकाकार दुर्गादास लिखते हैं—आचार्याणाम् इय शैली यत् सामान्येनाभिधाय विशेषेण विवृणोति।'[8] कथन 'शैली' शब्द के प्रयोग की प्राचीनता को प्रमाणित करते हैं किन्तु—"अभिव्यक्ति की पद्धति के अर्थ में 'शैली' का प्रयोग आधुनिक है जो अंगरेजी के स्टाइल का पर्याय है।"[9]

शैली : पारिभाषिक परिवृत्त

'शैली' शब्द रचनाकार के व्यक्तित्व, सामाजिक पर रचना के प्रभाव एवं रचना के विशिष्ट संदर्भों को रूपायित करता है। साहित्य मनीषियों ने इन्हीं

---

1 वामन—काव्यालंकार सूत्र वृत्ति, 12-13
2 भरतमुनि—नाट्यशास्त्र
3 बाणभट्ट—हर्षचरित, प्रस्तावना
4 दण्डी—काव्यादर्श, 1-40
5. आनंदवर्धन—ध्वन्यालोक, 3-6
6 मम्मट—काव्य प्रकाश, 9-79-104
7 पातंजलि—महाभाष्य 2-1-3, पृ० 563 सं० झज्झर
8 डॉ० भोलानाथ तिवारी—शैली विज्ञान, पृ० 12
9. सं० डॉ० नगेन्द्र—हिन्दी काव्यालंकार सूत्र, पृ० 55

संदर्भों को उकेरते हुए शैली को परिभाषित करने का प्रयत्न किया है।

1. शापेन हावर

"शैली आत्मा की मुखाकृति मात्र है।"[1]

2. इ० पी० व्हीपलै

"शैली लेखक के व्यक्तित्व का अविभाज्य तत्त्व है।"[2]

3. ददले

"शैली कलाकार की वह वैयक्तिकता है जो (कला के) माध्यम, तत्वों एवं गठन में परिलक्षित होती है।"[3]

4 गेटे

"शैली लेखक के मस्तिष्क की सत्य प्रतिलिपि है।"[4]

5 रेमी द गोरमोन्तस

"जब कोई व्यक्ति सार्वजनीन भाषा को विशिष्ट, निराली और अद्वितीय बोली के रूप में प्रस्तुत करता है वह उसकी शैली ही है।"[5]

6 टी० ई० ह्यूम

"शैली पाठक को अभिभूत करने का साधन मात्र होती है।"[6]

7. एफ० एल० लुकास

"शैली वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य दूसरों से सम्पर्क स्थापित करता है'''साहित्यिक शैली वह साधन है, जिससे एक व्यक्ति दूसरों को उद्दीप्त करता है।"[7]

---

1. एनसाइक्लोपीडिया आफ ब्रिटानिका, वोल्यूम 21, पृ० 488
2. टी० एडवर्ड—द न्यू डिक्शनरी आफ थाट
3. लुई ददले—द ह्यूमिनीटिज, पृ० 413
4. गेटे—ए आयरन स्टाइल इज द फेथफुल कापी आफ हिज माइन्ड
5. एफ. विम्ट—लिंग्विस्टिक्स एण्ड स्टाइल
6. टी० ई० ह्यूम—नोट्स आन लैंग्वेज एण्ड स्टाइल
7. एफ० एल० लुकास—स्टाइल, पृ० 49

8. एम खाफचेंको

"लेखक द्वारा अपनी कल्पना में विद्यमान विश्व की अभिव्यक्ति का साधन एवं पाठक को संतुष्ट एवं मोहित करने का साधन ही शैली है।"[1]

9 मिल्टन मरि

"शैली अनुभूति के वैयक्तिक रूप की निर्बाध अभिव्यक्ति है।"[2]

10. जे० वारवर्ग

"एक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लगभग समानार्थी शब्दों में से उपयुक्त चयन से ही अच्छी शैली बनती है।"[3]

11. ग्रीनी

"शैली कलात्मक विशिष्टता या अभिव्यंजना शक्ति का पर्यायवाची है।"[4]

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से शैली के सम्बन्ध में जो समान तथ्य उभरकर सामने आता है, वह उसे अभिव्यक्ति के माध्यम से जोड़ता है। स्थूल रूप से वामन के 'विशिष्ट पद रचना रीतिः' को ही स्वीकृति मिली है। वस्तुतः शैली अभिव्यंजना की ही कला है जो रचना को जीवन और विशेष स्वरूप प्रदान करती है। शैली ही है, जिसके कारण रचनाकार कहीं भी और किसी भी रूप में पहचाना जाता है। शैली ही पाठक को प्रभावित कर आकर्षित करती है। शैली ही रचना की सम्प्रेषण शक्ति की परिचायिका होती है। जहां तक शैली के गुणों का सम्बन्ध है, पाश्चात्य विद्वानों ने शैली के गुणों को दो भागों में विभक्त किया है—एक प्रज्ञात्मक और दूसरा रागात्मक। प्रज्ञात्मक गुणों में उन्होंने प्रसाद और स्पष्टता को और रागात्मक में शक्ति, करुण और हास्य को गिनाया है। इनके अतिरिक्त लालित्य के विचार से माधुर्य, सस्वरता और कलात्मक विवेचन को भी शैली की विशेषताओं में स्थान दिया है।......हमारे यहां के माधुर्य, ओज, प्रसाद के तीन गुण अधिक संगत, व्यापक और सुव्यवस्थित जान पड़ते हैं।"[5] साहित्य के संदर्भ में भावों, विचारों एवं अनुभूतियों की अभिव्यक्ति शैली का ही कार्य है।

---

1. एम० खाफचेंको—द राइटर्स क्रियेटिव इन्डीविजुवेलिटी एण्ड द डिवलपमेंट आफ लिट्रेचर, पृ० 104
2. मिल्टन मरि—द प्रोबलम आव स्टाइल, पृ० 17
3. जे० वारवर्ग—सम आस्पेक्ट्स आफ स्टाइल, पृ० 50
4. ग्रीन—आर्ट्स एण्ड आर्ट क्रिटिसिज्म, पृ० 374
5. बाबू श्यामसुन्दर दास—साहित्यालोचन (बारहवां संस्करण संवत् 2014), पृ० 263

निबन्ध और शैली

शैली की सही पहचान निबंध में होती है। निबंध को शैली की कसौटी कहा जाय तो अतिशयोक्ति न होगी। सुचिन्तित, विषय गाम्भीर्य एवं परिष्कृत भाव-विचार निबन्ध की विशेषता है तथा शैली इस विशेषता की अभिव्यक्ति का माध्यम है। शैली-सामर्थ्य पर निबन्ध की सफलता निर्भर करती है। जयनाथ नलिन ने ठीक ही लिखा है—"विचार या भाव निबन्ध की आत्मा है तो भाषा शरीर एवं शैली प्राण।"[1] वस्तुत निबन्ध में हम लेखक की आन्तरिक झांकी देखते हैं क्योंकि उसका बाह्य रूप उसके अन्तर का प्रतिबिम्ब मात्र है और अन्तर का ठीक-ठीक ज्ञान हमें शैली से ही मिलता है।"[2] यही कारण है कि अन्य विधाओं की अपेक्षा निबन्ध में शैली का विशेष महत्त्व होता है।

शैली . प्रकार विश्लेषण

शैली के पारिभाषिक विवेचन से उसका अभिव्यक्तिगत स्वरूप स्पष्ट हो गया। भाव, विचार और अनुभूति की व्यंजना शैली का कार्य है। इसी आधार पर शैली के प्रकारों का सधान किया जाता है। निबन्ध में व्यवहृत शैली के जो रूप तर्कसम्मत, वैज्ञानिक एवं मान्य हैं, वे इस प्रकार हैं—

1. प्रसाद शैली
2. व्यास शैली
3. समास शैली
4. विवेचन शैली
5. व्यंग्य शैली
6. तरंग शैली
7. विक्षेप शैली
8. प्रवाह शैली

इन शैली प्रकारों का परिचयात्मक विवेचन करना समीचीन होगा।

प्रसाद शैली

प्रसाद शैली का सम्बन्ध भाषा से है। इस शैली का प्रयोग प्राय वर्णनात्मक, विवरणात्मक, वैचारिक एवं हास्ययुक्त निबन्धों में प्रभूत मिलता है। प्रसाद शैली के लक्षण इस प्रकार हैं—

1. इसमें वाक्य-रचना सरल एव सीधी होती है।

---

1 डा० जयनाथ नलिन—हिन्दी निबंधकार, पृ० 30

2. डा० गंगाप्रसाद गुप्त—हिन्दी साहित्य में निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 30

2 भाषा अभिधात्मक सुबोध एवं माधुर्य युक्त होती है।
3 उपमा एवं रूपक अलंकार की छटा सर्वत्र देखी जा सकती है।
4 भावाभिव्यक्ति सुगुम्फित सुव्यवस्थित और स्पष्ट होती है।
5 इसमें गति एवं क्रियात्मकता का अभाव होता है किन्तु मिठास, स्वच्छता एवं आकर्षण विद्यमान होता है।

उदाहरणार्थ—

"बात का तत्त्व समझना हर एक का काम नहीं है और दूसरों की समझ पर आधिपत्य जमाने योग्य बात गढ़ सकना भी ऐसों वैसों का साध्य नहीं है। बड़े-बड़े विज्ञवरों तथा महा महा कवीश्वरों के जीवन बात ही के समझने समझाने में व्यतीत हो जाते हैं। सहृदयगण की बात के आनन्द के आगे सारा संसार तुच्छ जंचता है।

—प० प्रतापनारायण मिश्र कृत बात निबन्ध से

व्यास शैली

व्यास शैली व्यापकता एवं विस्तार से युक्त होती है। कुछ विद्वान् प्रसाद शैली एवं व्यास शैली को एक ही मानते हैं जबकि व्यास शैली की व्याख्यात्मकता विस्तार पाण्डित्य प्रदर्शन एवं उपदेशात्मकता उसे प्रसाद शैली से भिन्न करती है। व्यास शैली की विशेषताएं इस प्रकार हैं—

1 इसमें विस्तार और फैलाव अधिक होता है।
2 इसमें एक ही भाव अथवा विचार की विभिन्न प्रकार से व्याख्यात्मक आवृत्ति होती है जिसका उद्देश्य पाठक को सम्बन्धित विषय के प्रत्येक पक्ष को समझाना होता है।
3 उपदेशात्मकता एवं पाण्डित्य प्रदर्शन का भाव भी इसमें सन्निहित होता है।

उदाहरणस्वरूप यह अंश द्रष्टव्य है—

'यदि सचमुच भारतवर्ष की भाषाओं को उन्नत और समृद्ध बनाना चाहते हैं और देशवासियों को देशी भाषा के द्वारा उनके झगड़ा का फैसला सुनाना चाहते हैं तो यह कम से कम करणीय कार्य है। मैं दृढ़ता के साथ कहना चाहता हूं कि यह भारतीय जनता का जन्मसिद्ध अधिकार है। कोई सरकार उसकी उपेक्षा नहीं कर सकती। देश की जनता का अपनी भाषा में उच्चतर ज्ञान प्राप्त करने, कौशल सीखने और न्याय प्राप्त करने का जन्मसिद्ध अधिकार है।"

—आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी कृत कुटज से

समास शैली

कम से कम शब्दो मे अधिकाधिक अभिव्यक्ति समास शैली की विशेषता है। चिन्तन प्रधान निबन्धो म इस शैली का प्रभूत प्रयोग किया जाता है। इस शैली की कतिपय विशेषताए इस प्रकार है—

1 इसमे सस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली का बाहुल्य होता है।
2 वाक्य-रचना संश्लिष्ट एव मिश्र प्रकृति की होती है इस प्रकार अर्थ व्याप्ति अधिक होती है तथा एक म अनेक भाव या विचार गुम्फित हो जात हैं।
3 चित्रात्मकता का आग्रह अधिक रहता है फलत शब्दजाल मे अर्थ बोध की सहजता लुप्त हो जाती है।
4 विचार और शब्द गुथे हुए से एक क्रम म अग्रसर होते हैं।
5 उपमा, रूपक और उत्प्रेक्षा आदि की आलकारिकता भी विद्यमान रहती है।

उदाहरणार्थ—

'गति अनिवार्य है। उसके भीतर सगति अनिवार्य है। प्रगति सगति के अनुकूल ही हो सकती है। उसम प्रतिकूलता टिक नही सकती। जैसे बहती हुई धारा के वेग म से उछल कर कुछ पानी के कण मौज से किसी भी दिशा म उडत रह सकते है, वैसे ही इतिहास की गणना मे न आने वाली कुछ बूँद बहक कर इधर उधर जा सकती हैं। पर, इतिहास की धारा का प्रवाह तो एक है और एक ही ओर है यह 'ओर' स्वय इतिहास मे से स्पष्ट है।'

—जैनेन्द्र कृत 'साहित्य का श्रेय और प्रेय' से

यहा मनोविश्लेषणात्मक चिन्तन की सामाजिक व्यजना देखते ही बनती है।

विवेचन शैली

विचारात्मक, सैद्धातिक एव समीक्षात्मक निबन्धो म इस शैली का प्रयोग मिलता है। इसमे दार्शनिकता, तार्किकता, खण्डन मण्डन वृत्ति, व्याख्या एव विवेचना आदि विशेषताए रहती हैं।

समीक्ष्य शैली की विशेषताए इस प्रकार हैं—

(क) भाषात्मक सरचना जटिल एव शब्द विधान तत्सम युक्त होता है। वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग भी होता है।
(ख) वैचारिकता एव बौद्धिकता की प्रधानता रहती है। विचार कूट-कूट कर भरे होते है, जिसके कारण सघनता एव गाम्भीर्य आ जाता है।

(ग) विचार तर्काधारित होते है। विचार सूत्रात्मक से व्याख्यात्मक परिक्षेत्र की यात्रा करते है।

(घ) अर्थ बोध शब्दजाल के वृत्त मे से प्रस्फुटित होता है।

उदाहरणार्थ—

'मेरी समझ म आधुनिकता निज मे कोई मूल्य या तथ्य नही, बल्कि एक स्वभाव है, एक सस्कार प्रवाह है, एक बोध प्रक्रिया है। चाहे जो मानें पर गुण-धर्म के हिसाब से 'स्वभाव' बोध प्रक्रिया सस्कार प्रवाह आदि एक ही बातें हैं। इसे तथ्य का मूल्य मानने का प्रश्न तभी होता है जब लोग सस्कार को ही मूल्य मान बैठते है, यथा—प्रश्नाकुलता, आस्वादन मे विश्वास या यायावर-वृत्ति आदि जो सस्कार है, या स्वभाव के अग है, चिन्तन की असावधान अवस्था म मूल्य मानकर लोग आधुनिकता की मूल्य के तौर पर चर्चा करने लगते हैं। पर यदि उनसे बात आगे बढायी जाए तो घुमा फिराकर यही जवाब मिलेगा—"मूल्य हीनता ही आधुनिकता का मूल्य है।"

—कुबेरनाथ राय कृत 'गन्ध मादन' से

आधुनिकता की मस्तिष्क को झकृत करने वाली तर्क शक्ति के माध्यम से ज्ञान की विभिन्न पर्तें खोलने मे विवेचन शैली की सफलता छुपी है।

व्यग्य शैली

विनोद, तलखी, व्यग्य एव चुटीलापन इस शैली में यथानाम गुण विद्यमान रहते है। भाषात्मक सरचना व्यजनात्मक अर्थ बोध से युक्त होती है। अन्तस् को झकझोर देने वाली शक्ति इसकी विशेषता है। बालमुकुन्द गुप्त, बालकृष्ण भट्ट, रामचन्द्र शुक्ल, हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, अज्ञेय, हरिशकर परसाई आदि के निबन्धो मे इस शैली के प्रयोग के प्रभूत उदाहरण देखे जा सकते हैं। व्यग्य शैली की विशेषताए इस प्रकार है—

(क) भाषा मे सरलता के साथ दश एव गम्भीरता के साथ व्यजना का सौन्दर्य विद्यमान रहता है। शब्द सरचना श्लेषात्मक होती है।

(ख) अल्प शब्दा मे अर्थ सघनता की व्याप्ति होती है।

(ग) व्यजकता, तीक्ष्णता, नुकीली एव चुटीली होती है, साथ ही रजकता भी ध्येय होती है।

(घ) बुद्धि और हृदय अर्थात् विचार और भाव का समन्वय होता है।

(ड) व्यग्य शैली तीक्ष्ण, श्लेष एव परिहास तीन रूपो म विद्यमान है।

(अ) धारदार, चुभने वाले नुकीले शब्द प्रयोग द्वारा दूसरो के विश्वासो,

नीतियो, विचारो और मान्यताओ पर चोट करना शैली की तीक्ष्णता है।

(आ) मीठे लगने वाले सरल किन्तु व्यापक अर्थ देने वाले शब्दो का प्रयोग किया जाता है। शालीनता के आवरण मे गहरी चोट श्लेषात्मक व्यंग्य शैली की विशेषता है।

(इ) श्लेषात्मक स्वरूप मे जहा गभीरता विद्यमान होती है वही हास-परिहास मे हल्कापन रहता है। वाह्य प्रहार करते हुए गुदगुदाना इसका वैशिष्ट्य है।

क्रमश: उदाहरण द्रष्टव्य है—

(अ) "एक पीढी भर मे कितना बडा परिवर्तन हो गया, इसका प्रमाण देने के लिए कुछ कल्पना-विहीन लोग कदाचित् आकडो की ओर दौडें, कोई बुनियादी तालीम लेकर भाखडा-नागल तक क्रिया-कलाप की दुहाई दें··· पर इस सबकी कोई आवश्यकता नही है, आप एक चौराहे पर खडे होकर किसी से मार्ग पूछिए और उसी के उत्तर मे युगान्तर बिजली सा कौंध जाएगा" वह जो बडे-बडे दो लाल बोर्ड हैं न, जिन पर छ-छ फुट के अक्षरो मे लिखा 'खाज-खुजली' वहा से बायें को मुड जाइए। वहा एक रास्त के सिरे पर बहुत बडे बोर्ड पर लिखा है—'डोन्ट वाक टू योर डेथ' और मरते आदमी का चित्र है। उसी सडक पर हो लीजिए, कोई पचास कदम आगे जाकर एक पक्की दीवार दिखेगी जिस पर चूने से लिखा है 'नामर्दी-नामर्दी-नामर्दी'।' हा उन्ही की छत के ऊपर एक बोर्ड है जिसम बिजली की बतियो से लिखा है—'न्यूरोसिस'। बस आप न्यूरोसिस के बोर्ड के नीचे चले जाइए—वह आधुनिकता का दूसरा नाम है और समकालीन जीवो के उपयुक्त विल्ला। ससार भर के न्यूरोटिको एक हो जाओ, तुम्हारे न्यूरोसिस के सिवा और तुम्हारा क्या कोई छीन लेगा।"

—अज्ञेय कृत सब 'रग' के मार्ग दर्शन निबंध से

(आ) "जब-जब मैं कलकत्ता के चिडियाघर मे गया हूँ, तब-तब मुझे ऐसा लगा है कि ससार के जीवो मे सबसे गम्भीर और चिन्तामग्न चेहरा उस चिडियाघर मे रखे हुए वनमानुष का है ·· मैं समझता था कि यह कलकत्ते वाला वनमानुष ही बहुत गम्भीर और तत्व चिन्तक लगता है। अब मैंने अपनी राय में सशोधन कर लिया है। वस्तुत ससार के सभी वनमानुष गम्भीर और तत्त्वदर्शी दिखाई देते हैं।"

—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी कृत 'अशोक के फूल' से

(इ) "उल्लू फिर किसी के पास जा कर कहता है—देवी यह मेरा गाढ़ा भाई है। लक्ष्मी फिर उस चेक काट कर देती है। इस तरह उल्लू लक्ष्मी का चाचा, मामा, फूफा, भाई, भतीजा के पास से आता है और चेक दिलवा

देता है। लक्ष्मी पूछती है —'क्यो रे! हरिशकर परसाई तेरा कोई नही है?' उल्लू कहता है—वह मेरा दुश्मन है, उसका नाम मत लो देवी।'

—हरिशकर परसाई कृत 'बेईमानी की परत' से

तरग शैली

इसी को कुछ साहित्य-समीक्षक आवेग शैली की सज्ञा देते हैं। इसमे भावो या विचारो का आवेग मिलता है, वे एक दूसरे पर आधिपत्य जमाने के लिए गतिमान रहते हैं। इस शैली की प्रमुख विशेषताए इस प्रकार हैं—

(क) भाषा सगठन छोटे-छोटे वाक्यो पर आधृत होता है। वाक्य कभी क्रियाहीन, कभी वक्र, कभी खण्डित ही रह जाते हैं।

(ख) शब्दावली मरल, मधुर एव आवेग युक्त होती है। कठिन, तत्सम शब्दावली युक्त सस्कृतनिष्ठता का निषेध रहता है।

(ग) भावो-विचारो के झरनो की उत्ताल तरगो का उतार-चढाव आलोडन-विलोडन स्पष्ट परिलक्षित होता है।

उदाहरणार्थ—

"सामने जहा तक नजर जाती है, समुद्र-ही-समुद्र है। उसमे ज्वार आया है, बडी-बडी तरगे उठती, एक दूसरे से टकराती, फेन उडाती, गर्जन करती, आगे बढती और बाध पर सर पटक कर फिर लौट जाती। ऊपर जो पूर्णचन्द्र आधी रात तय करके सर पर खडा मुस्करा रहा है, उसकी मुस्कराहट उन तरगो पर उद्वेलन कर रही है। कभी-कभी मालूम होता है, किसी अदृश्य छोर को पकडकर शत-सहस्र ज्योत्स्ना कुमारिया चन्द्रमण्डल से उतर रही है और आकुल व्याकुल समुद्र की इन तरग मालाओ से कम्पित अधरो को चूम-चूम कर अट्टहास कर उठती हैं।

—रामवृक्ष बेनीपुरी—'गेहू और गुलाब' से

विक्षेप शैली

विक्षेप का सामान्य अर्थ है—बिखरा हुआ, विच्छिन्न, अस्थिर, मन का इधर-उधर विचरण। निबन्ध लेखक जब स्वच्छद रूप से बिना क्रम का ध्यान रखे विचारो को प्रकाशित करता है। विक्षेप शैली की उल्लेखनीय विशेषताए द्रष्टव्य हैं—

(क) भाषा काव्यात्मकता से युक्त होती है।

(ख) भावुकता के प्रवाह मे भाव एव विचारधारा व्यवस्थित रूप मे न बह कर खण्ड-खण्ड होकर रुक-रुक कर व्यक्त होती है।

(ग) कल्पना विचार एवं भाव के गगन मे रचना को स्वच्छंद अनुक्रम प्रदान करती है।

उदाहरणार्थ—

"न मैं गिरजे मे जाता हू और न किसी मन्दिर मे, न मैं नमाज पढता हू और न रोजा ही रखता हू, न सध्या ही करता हू, न किसी आचार्य के नाम का मुझे पता है और न किसी के आगे मैंने सिर ही झुकाया हैं। इन सबसे प्रयोजन ही क्या और हानि ही क्या ? मैं तो अपनी खेती करता हू, अपने हल और बैलो को प्रात उठकर प्रणाम करता हू, मेरा जीवन जगल के पेडो और पक्षियो की सगति मे बीतता है।"

—अध्यापक पूर्णसिह—'आचरण की सभ्यता'

जब कभी आवेग की अतिशयता बढ जाती हैं और विचार के स्थान पर भाव प्रधान हो जाते है तो प्रलाप का रूप धारण कर लेते है।

प्रवाह शैली

जब रचनाकार भावो को इस प्रकार प्रस्तुति दे कि वे निश्चित वेग से अग्रसर हो तो वहा प्रवाह शैली प्रयुक्त होती है। कतिपय आवेग शैली एवं प्रवाह शैली को एक ही मानते है। हमारी दृष्टि मे आवेग शैली मे भाव-विचार वेग के कारण क्रम छोडते हुए, खण्डित रूप मे भी आगे बढते है। इसके विपरीत प्रवाह शैली मे भावो मे क्रमबद्धता होती है तथा सम का भाव विद्यमान रहता है। इस शैली मे उच्छृखलता भी नही होती है। प्रवाह शैली की विशेषताए द्रष्टव्य है—

(क) इसमे भावो की प्रधानता रहती है किन्तु ये बुद्धि एवं विचारो द्वारा नियन्त्रित होते है।

(ख) भाषा सरल, सरल, भावानुकूल एवं प्रवाहमयी होती है।

(ग) इसमे कल्पना प्रवणता एवं काव्यात्मकता के दर्शन होते है।

उदाहरणार्थ—

"जिन्होंने पाँच जल की धाराओ से घिरा और रग विरग फूलो मे छिपे चरणो से लेकर शून्य नीलिमा मे प्रकट मस्तक सफेद हिम म समाधिस्थ केदार का पर्वत देखा है वे ही इसका आकर्षण जान सकते है। मीलो दूर से ही वह उज्ज्वल शिखर अक्षरहीन आमत्रण के समान खुला दिखाई देता है। जैसे-जैसे हम उस ओर बढते हैं वह विस्तार मे बढता जाता हैं और उसकी रजत विद्युत लेखाओ के समान झिलमिलाती हुई रेखाए स्पष्टतर हो जाती है।"

—महादेवी वर्मा—'स्मृति की रेखाए'

दिनकर जी के निबंधो म उपयुक्त उल्लिखित अनक शैलियो को यथा प्रसग प्रयोग हुआ है।

दिनकर क निबन्ध साहित्य मे शैली विधान का स्वरुप

दिनकर जी अपने अन्तस के भावो और विचारो को अपने व्यक्तित्व के अनुरूप ही प्रभावशाली ढग से सम्प्रेषित करने मे सिद्धहस्त ह। समथ कवि होने के कारण निबध रचना मे भी समान रूप स सजग रहत हुए श्रम करते है। भावात्मकता विचारात्मकता एव कलात्मकता की दृष्टि से उनकी निबध रचनाए आकषक और सफल ह। दिनकर जी के निबधो म विचार तत्त्व अनुभूति कल्पना और आत्मीयता सभी तत्त्वो का समावेश मिलता है जो उनकी पारदर्शी शैली के साथ उनक हर निबध म देखा जा सकता है। तक और प्रमाण के साथ अपने अनुभवो और गहन अध्ययन प्रसूत सदर्भो को साथ लकर चलने के कारण उनकी शैली का निजी आकषण है। कही बौद्धिकता के साथ साथ व्यग्य का समावेश मिलेगा तो कही विचारो की गूढ गुम्फित परम्परा उनम मिलेगी और कही भावात्मक रसात्मकता। वस्तुत शैली दिनकर की सम्पूण रचनाशीलता का ही अग है उसके साथ पूरी तरह जुडी हुई। उनके निबध प्राय विचारात्मक और समीक्षात्मक है। इसीलिए उसम विवेचनात्मक शैली क अतिरिक्त प्रसाद शैली प्रवाह शली व्यग्य शली एव तरग शैली का भी प्रयोग मिलता है। इन शैलियो के प्रयोग स एक बात समर्थित रूप से रखाकन योग्य यह है कि उनकी अभिव्यक्ति की स्पष्टता सहजता और स्वाभाविकता सवत्र विद्यमान रहती है।

दिनकर के निबधो म प्रमुखत प्रयुक्त शलिया इस प्रकार है—

1 विवेचन शैली
2 प्रसाद शैली
3 प्रवाह शली
4 व्यग्य शैली

विवेचन शैली

विवचन शली दिनकर की सवप्रिय शली है। उनक सद्धातिक और समीक्षात्मक ही नही भावात्मक निबधो म भी इस शैली का प्रयोग मिलता है। वस्तुत यह कहना अधिक उचित है कि दिनकर का अध्ययन और मनन उनक निबधो के रूप म विवचनात्मक शैली के माध्यम स प्रस्तुत हुआ है। साहित्य धम समाज राजनीति सस्कृति एव युगीन अनुचिन्तन स सम्भित निबधो म उनकी विवेचन शक्ति तार्किकता एव वैचारिक परिपक्वता देखी जा सकती ह। एस निबधो म स्वाभाविक रूप म विवचनात्मक शली का प्रयोग किया गया है। व अत्यन्त गूढ

एव सैद्धांतिक विषयो को भी विवेचन-शैली से अत्यत सरल बनाते चलते हैं। विचारो की सुसम्बद्ध व्यवस्था और गम्भीर विषय-प्रतिपादन करने वाली इस शैली मे बोधगम्यता बनाए रखना दिनकर की उल्लेखनीय शैलीगत विशेषता है। यथा—

(क) "जिसे हम मन की जवानी कहते है, वह उम्र को कोडे मारकर हाकने की कला का नाम नही है। उम्र के साथ हमारे शरीर और मन मे जो परिवर्तन होने लगते है, उनका प्रसन्नतापूर्वक साथ देने के लिए दिमाग को राजी करना ही मन की असली जवानी है। साथ तो देना ही पडता है। अब बात रह जाती है कि दिमाग तल्खी के साथ-साथ देता है या मौज के साथ। जिसने मौज के साथ साथ दिया, उसे पछताने की जरूरत नही होती।"[1]

(ख) "कला की खोई हुई प्रतिष्ठा को वापस लाने का सही तरीका यह नही है कि हम उनकी प्रचारात्मकता पर जोर दें, बल्कि यह कि, हम उन गुणो की कद्र करें जिनका प्रतिनिधित्व करने के कारण कला आज तक आदरणीय रही है, उन मूल्यों पर जोर डालें जिनका दर्शन या विकास वैज्ञानिक तर्कों से नही प्रत्युत, कल्पना और सहज वृत्ति से किया जाता है।"[2]

(ग) "गाधी जी की कल्पना का समाज है। उसमे प्रधानता समूह की नही बल्कि व्यक्ति की है। समाज के रोग निदान के लिए वे समाज रूपी रोगी की कल्पना नही करते बल्कि रोगी तो वे एक-एक सदस्य को मानते है और रोग निवारण के लिए वे भी समाज के ढाचे पर प्रहार नही करके व्यक्ति को ही समझाते हैं।"[3]

दिनकर के निबन्धो मे बौद्धिकता का प्राधान्य होते हुए भी भावात्मकता के दर्शन होते हैं। उनके ऐसे निबन्ध तथ्य प्रधान, स्पष्ट, तर्क और युक्ति युक्त ढग से कारण-कार्य देखकर विचारो और भावानुभूतियो को सुगुम्फित वाक्य विन्यास एवं सटीक शब्दावली में विवेचनात्मक शैली के माध्यम से प्रस्तुत करते है। उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

"चरित्र कर्म है, व्यक्तित्व चिन्तन है। चरित्र की कठोरता साहित्य में क्लासिक शैली को जन्म देती है। व्यक्तित्व की उद्दामता से रोमाटिक शैली का आविर्भाव होता है। साहित्य की आधुनिक समस्या यह है कि लेखक शैली तो चरित्र की अपनाना चाहते हैं, किन्तु उद्दामता उन्हे व्यक्तित्व की चाहिए।"[4]

---

1. रेती के फूल, पृ० 11
2. रेती के फूल, पृ० 65-66
3. अर्धनारीश्वर, पृ० 108
4. शुद्ध कविता की खोज, पृ० 199

अथवा

"सभ्यता के किसी मूल्य का समर्थन करना गलत मूल्य का समर्थन है क्योंकि सभ्यता के सारे मूल्य खोखले हो चुके हैं । मनुष्य विरासत नही, योजना है । वह अतीत का बोझ ढोने को नही भविष्य के निर्माण के लिए जन्म लेता है । सभ्यता के साथ व्यक्ति के जो भी एकरारनामे है, उनका आधार अतीत है । इन एकरारनामो को फाडकर मनुष्य को चाहिए कि शुद्ध चिन्तन एवं बौद्धिक अन्तर्दृष्टि के साथ वह अपना मूल्य आप तैयार करें ।"[1]

विचारो की शृखला की दृष्टि से निम्नाकित अंश उदाहरणीय हैं—

(क) "और धर्म का जन्म हमारे आत्मा वाले धरातल पर होता है । किन्तु धर्म विजय की आत्मा के धरातल से उतरकर जैव धरातल पर आने मे है ।'''धर्म आत्मा के कोठे पर और आचरण पशुओ के समान, यह अच्छे मनुष्य का लक्षण नही है, उसके धर्म का मूल्य आध्यात्म मे, किन्तु उसकी (धर्म की) अभिव्यक्ति दैनिक आचरणो की पवित्रता मे होनी चाहिए ।"[2]

(ख) "प्रेरणा बुद्धि के केन्द्रीयकरण से उत्पन्न कोई अनिर्वचनीय शक्ति है जिसके मूल हमारे सस्कारो मे रहते है, जिसकी शिराए हमारी स्मृतियो मे गडी होती है तथा जो मनुष्य की सद्बुद्धि से समन्वित होती है ।'''जब हम जीवन के सपूर्ण अनुभवो, समस्त स्मृतियो एव बुद्धि की सारी शक्ति को लेकर सोचने लगते है अर्थात् चिन्तन की प्रक्रिया मे जब केवल मन ही नही सम्पूर्ण अस्तित्व विलीन हो जाता है, उस समय हमारे भीतर एक विलक्षण शक्ति जग पडती है जो छलाग मारकर अदृश्य पर से आवरण को खीच लेती है जो तर्कों की राश मे चलकर अनायास समाधान के दर्शन करा देती है यही शक्ति प्रेरणा शक्ति है ।"[3]

इन उदाहरणो से दिनकर की विश्लेपण क्षमता का प्रमाण मिल जाता है । अपने कथन को जिस निर्भीकता और दृढता के साथ वे कहते है वह ध्यान योग्य है । कोरी लफ्फाजी से दूर तथ्यपरकता उनकी विवेचन शैली की विशेषता है । विवेचन शैली मे दिनकर जी के विचार और अनुभूतिया कसी हुई जीवन्त भाषा मे सुगुम्फित हैं ।

प्रसाद शैली

दिनकर के निबन्धो मे प्रसाद शैली का प्रयोग सशक्त रूप मे हुआ है, किन्तु प्रतिनिधि रूप मे नही । भाषा की स्वच्छता, विचारो की स्पष्टता, वाक्य विन्यास

---

1. शुद्ध कविता की खोज, पृ० 200
2. दिनकर—वट-पीपल, पृ० 112
3. दिनकर—काव्य की भूमिका, पृ० 129

की सरलता और अभिव्यंजना की सुबोधता इस शैली की विशेषताएं है। वे सीधी स्वाभाविक आत्मीयतापूर्ण बात कहते है। इनमे गत्यात्मकता नही है। कभी स्वानुभूत चिन्तन की रश्मिया तो, कभी राष्ट्र-प्रेम तथा सस्कृति का रग, दिनकर की रचनाओं मे प्रसाद शैली की पहचान है। समीक्षात्मक निबन्धो मे इस शैली के कुछ उदाहरण विशेषत देखे जा सकते है—

(क) "मनुष्य के भीतर जो एक सूक्ष्म आध्यात्मिक व्यक्तित्व है, उसी ने अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम खोजते हुए कविता का आश्रय लिया और इसी जीवन को अभिव्यक्त करने के लिए कविता प्रादुर्भूत हुई। मस्तिष्क के जो गुण है, बुद्धि मे जो चमत्कार है, वे मनुष्य के स्थूल जीवन को सजाते-सवारते और व्यक्त करते है। किन्तु मनुष्य के भीतर वाला मनुष्य इनकी पकड मे नही आता। उसे पकड़ने के लिए भावना का जाल और हृदय की जजीरें चाहिए।"[1]

(ख) "नारी का शिक्षा ग्रहण करना गौरव की बात है। और उस शिक्षा को समाज सेवा मे लगाना और भी गौरव की बात है। आज का युग आधुनिक युग है, बुद्धिवाद इस युग का जनेऊ है।"[2]

(ग) "जिसे हम आधुनिकता कहते हैं, वह एक प्रक्रिया का नाम है। यह प्रक्रिया अधविश्वास से निकलने की प्रक्रिया है। आधुनिकता कोई मूल्य नही, बल्कि अत्याधुनिक कवि और लेखक जो कुछ लिखते हैं उससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वह मूल्यो के विघटन का पर्याय है।"[3]

भाषा की सरलता, सुबोधता एव सरल वाक्य रचना तो दिनकर प्रयुक्त प्रसाद शैली की विशेषता है ही, साथ ही शब्दो का विशिष्ट प्रयोग भी एक आकर्षण है। यह निबन्धांश द्रष्टव्य है—"राजमहल चाहता है प्रतिरोध और प्रताप, सम्पत्ति शक्ति और विशालता। हम कुबेर है, हम सूर्य है, हम अर्जुन और भीम है, हम दहकते हुए अगारे है और जो कोई हमारा स्पर्श करेगा, वह जल जाएगा। भला कौन कह सकता है कि राजमहल के उद्देश्य हीन है? मगर मन्दिर सिखाता है अनवरोध; मन्दिर सिखाता है विनयशीलता, मन्दिर सिखाता है अपरिग्रह दीनता और ब्रह्मचर्य।"[4]

दिनकर जी के विवरणात्मक-वर्णनात्मक निबन्धो मे मुख्यत. प्रसाद शैली के दर्शन होते हैं; तथापि यह उनकी आधारभूत शैली नही है। प्रसाद शैली का प्रयोग विवेचनात्मक शैली की छाया मे ही हुआ। हा, वे सरलतम भाषा मे कठिन-

1. अर्धनारीश्वर, पृ० 22
2. साहित्यमुखी, पृ० 137
3. साहित्यमुखी, पृ० 173
4. अर्धनारीश्वर, पृ० 3

सम बात कहने मे अवश्य सफल हुए हैं । शीघ्र समझ मे आने वाले विचार और कथन का साधारण ढग से प्रयोग इनका शैलीगत वैशिष्ट्य है।

प्रवाह शैली

दिनकर जी ने अपने निबन्धो मे शुद्ध बौद्धिकता एव वैचारिक प्राबल्य कही भी नही रहने दिया । उनम यथास्थान भावुकता का सचार किया है । वे पाठक के साथ आत्मीयतापूर्ण सम्बन्ध बराबर बनाए रखते है । कुछ निबन्ध तो उनके स्वच्छन्द भावो विचारो के अविरल प्रवाह को बडे ही कलापूर्ण ढग से प्रस्तुत करते हैं । ऐसे स्थलो पर स्वाभाविक रूप से प्रवाह शैली अपना प्रभाव दिखाती है। इस कोटि की रचना शैली मे भाषा भावो को अपने साथ लेकर वह चलती है या भाव भाषा को बहा ले जाते है । माधुर्य गुण युक्त गतिमान भाषा मे व्यक्त भाव और विचार अपना अमिट प्रभाव पाठक पर छोडते है । कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य है—

(क) "दूसरी सूरत यह है कि वह उन गरीब आत्माओ की हमजोली बन जाये, जो न बहुत अधिक सुख पाती हैं और न जिन्हे बहुत दुख पाने का ही सयोग है, क्योकि ये आत्माए ऐसी गोधूलि मे बसती है, जहा न तो जीत हसती है और न कभी हार के रोने की आवाज सुनायी पडती है। इस गोधूलि वाली दुनिया के लोग बधे हुए घाट का पानी पीते है, व जिंदगी के साथ जुआ नही खेल सकते । और कोई को कौन कहता है कि पूरी जिन्दगी को दाव पर लगा देने मे कोई आनद नही है ?"[1]

(ख) "एक बार भूकम्प और अग्नि काण्ड, दोनो का धरती पर साथ ही आक्रमण हुआ । महल गिर गए, झोपडिया जलकर खाक हो गई । कही नई जमीन पानी मे म निकल आई । कही बस बसाए नगर समुद्र म समा गए । पशु-पक्षियो, कीडे-मकोडो के साथ आदमी बहुत बर्बाद हुए । कितने ही महावृक्षो का पता नही रहा और कितन ही पहाड़ो की छाती फट गई ।"[2]

ऐसे स्थलो म कविता का सा आनन्द मिलता है । भाषा मे प्रवाह और सालित्य विद्यमान है । दिनकर का कवि व्यक्तित्व के अनुकूल है इसमे उनकी भावुकता का प्रभाव स्पष्टत परिलक्षित होता है । दिनकर न भावात्मक निबन्धो मे प्रवाह शैली का प्रयोग किया है । ऐसे निबन्धो मे व अपनी रागात्मक अनुभूति मे हमारे हृदय का विभोर कर देते हैं ।

---

1 रेती के फूल पृ० 3
2 वही पृ० 40

व्यंग्य शैली

विचारपूर्ण गम्भीर निबन्धों को झेल पाना पाठक के लिए कठिन है, इस तथ्य से दिनकर भली भांति परिचित थे। अतएव उन्होंने कुछ निबन्धों में व्यंग्य शैली को अपनाया। अनुभूतिमय भावात्मकता, व्यंग्य एव हृदय की चुटकी लेने वाली उक्तियां विचार यात्रा के विश्राम के अवसर देते है। ऐसे स्थल समीक्षात्मक, भावात्मक एव विचारात्मक निबन्धो मे द्रष्टव्य हैं। व्यंग्य शैली के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं—

(क) "ईर्ष्या का काम जलाना है, मगर सबसे पहले वह उसी को जलाती है जिसके हृदय मे उसका जन्म होता है। आप भी ऐसे बहुत से लोगों को जानते होंगे जो ईर्ष्या और द्वेष की साकार मूर्ति हैं और जो बराबर इस फिक्र मे डूबे रहते हैं कि कहा सुनने वाले मिलें कि अपने दिल का गुबार निकालने का मौका मिले। श्रोता मिलते ही उनका ग्रामोफोन बजने लगता है और वे बडी ही होशियारी के साथ एक-एक काड इस ढब से सुनाते है, मानो, विश्व कल्याण को छोडकर उनका और कोई ध्येय ही नही हो।"[1]

(ख) "कल्पना कीजिये कि देश का एक-एक आदमी जवाहरलाल हो गया। तो फिर यहा का एक-एक आदमी सोचेगा, योजना बनाएगा और बहस करेगा। लेकिन इन पैंतीस करोड जवाहरलालो को भोजन कौन देगा? उनके लिए कपडे कौन चलाएगा? जवाहरलाल बनने मे और सब ठीक है, कठिनाई सिर्फ इतनी है कि जवाहरलाल कुदाल नही चला सकता, हथौडे नही उठा सकता और ज्यादातर वह अपनी मोटर भी आप नही हाकता।"[2]

(ग) "साहित्य मे सौन्दर्य केवल चाशनी है। उसकी लपेट मे समाज को हमे कुनैन की गोलिया खिलानी है। जिस साहित्य का कोई उपयोग नही, वह हमे बिलकुल नही चाहिए।"[3]

दिनकर का शिष्ट व्यग्य मन-मस्तिष्क को झकृत कर देता है और गम्भीर चिन्तन को आत्मसात करने का अवकाश भी प्रदान करता है। उनके व्यग्य मे अर्थगर्भित हास्य की गम्भीरता विद्यमान है।

दिनकर का व्यग्य केवल विनोद के लिए नही है। व्यग्य मे रजकता के साथ चुभन भी है, सरसता के साथ पैनापन है, जो रचना शैली को प्रभावशाली एव विचार को सम्प्रेषणीय बनाता है।

---

1. रेती के फूल, पृ० 17
2. वही, पृ० 103
3. शुद्ध कविता की खोज, पृ० 193

निष्कर्ष

दिनकर जी के निबन्धों का शैली विधान की दृष्टि से मूल्यांकन इस तथ्य की संपुष्टि करता है कि व शैलीगत वैविध्य को निबन्ध की सफलता की कसौटी मानते हैं। उन्होंने निबन्धों की विषयवस्तु के अनुरूप गभीर, सरल प्रवाहपूर्ण व्यंग्यपूर्ण एवं विक्षेपपूर्ण शैलियों का प्रयोग किया है। वे ललित निबन्धकार न होते हुए भी लालित्य का सफल समाहार अनेक निबन्धों में कर सके हैं। किन्हीं नवीन रचना शैलियों का पुरस्कर्ता तो उन्हें हम नहीं कह सकते हैं, हा, शैलीगत प्रयोग का वैशिष्ट्य उनके विचारात्मक तथा गवेषणात्मक निबन्धों म निश्चय ही लक्षित होता है। बहुआयामी रचनाधर्मी प्रतिभा के इतिकार होने के कारण शैलीगत प्रयोग उनका अभिप्रेत भी नहीं था। उन्होंने विषयवस्तु की तथ्यपरकता और तार्किकता पर रचना दृष्टि केन्द्रित की है। हा, शैलीगत आभिजात्य दिनकर के निबन्धों की निश्चय ही उल्लखनीय विशेषता है।

5

दिनकर के निबंध साहित्य मे भाषात्मक संरचना का स्वरूप

मानव के जीवन मे भाषा की महत्ता अथ से इति तक परिव्याप्त है। वस्तुत भाषा ही अभिव्यक्ति का सर्वाधिक विशिष्ट साधन है। भाषा ही वह सेतु है, जिस पर चलकर भाव, विचार, अनुभूतिया और अनुभव सामाजिक तक पहुचते हैं, एक का सत्य दूसरे तक सप्रेषित होता है। डा० रामकुमार वर्मा ने ठीक ही लिखा है—"भाषा भावो की वाहिका है। इसीलिए भावो का स्पष्टीकरण और प्रभावशाली प्रयोग भाषा पर ही अवलम्बित है।"[1] भाषा बहता नीर है अस्तु परिवर्तन उसका नियम है। परिवर्तन की यह प्रक्रिया उसमे निरन्तर रहती है और इस क्रम मे रचनाकार की अभिरुचि और प्रतिक्रियात्मक दृष्टि भाषा को अलग अलग दिशा और स्वरूप प्रदान कर विकासमान करती है।" भाषा बदलती है तो भाषा के परिवर्तन भाषा से निकलते हैं, भाषा एक सामाजिक और युगीन समय है जिससे आगे बढा तो जा सकता है, पर सीढी दर-सीढी समाज को अपने साथ लिए हुए ही। भाषा को समूल उखाडकर उसकी जगह नही। भाषा हम नही दे सकत, नये शब्द नये मुहावरे, नये प्रयोग हम कर सकते हैं तो एक जाने हुए उभय पक्ष द्वारा स्वीकृत ढाचे के भीतर ही।"[2] सामान्य जीवन मे भाषा दो स्तरो पर विकसित होती है। प्रथम बोलचाल की भाषा, द्वितीय सर्जनात्मक भाषा। भाषा के इन दोनो स्तरो मे भिन्नता होती है।" बोलचाल की भाषा निरन्तर के जीवित उपयोग से

---

1 डा० रामकुमार वर्मा—साहित्य शास्त्र, पृ० 116

2 साप्ताहिक हिन्दुस्तान, 25-31 मई, 1980 (श्री अज्ञेय का 'युग सधियो पर देशीयता और मौलिकता' लेख), पृ० 10

विकसित होती है। इस दृष्टि से किसी भी देश की साहित्यिक भाषाएं वहा के जन समुदाय की भाषा के विकास की विभिन्न मंजिलो को सूचित करती हैं— परस्पर मिलती-जुलती बोलियों के समूह में से कोई बोली किन्हीं विशिष्ट कारणों से राजनीतिक, सामाजिक अथवा अन्य साहित्यिक सृजनशीलता का माध्यम बन जाती है। फिर कई शताब्दियों के प्रयोग के उपरान्त जब उसकी प्राण शक्ति घटने लगती है और बदलते हुए नये युग के यथार्थ से जब यह अपने-आपको संपृक्त करने में असमर्थ पाती है तब उसके विकास की मंजिल पूरी हो जाती है और उसका गत्यात्मक स्वरूप जड़ हो जाता है।"[1] निबंधकार भाषा के प्रयोग में वैशिष्ट्य का परिचय विषय विवेचना के माध्यम से प्रस्तुत करता है। निबन्ध में भाषा संतुलित, संप्रेषणीय एवं व्यंजनापूर्ण होती है। दिनकर की भाषात्मक संरचना इन्ही गुणों के परिप्रेक्ष्य में द्रष्टव्य है।

दिनकर के निबन्धों की भाषात्मक संरचना का वैशिष्ट्य

दिनकर जी के निबन्धों में भाषा विविधोन्मुखी स्तरों पर विकासमान हुई है। इनमें बोलचाल एवं संस्कृतनिष्ठ पदावली का प्रयोग प्रमुख है। दिनकर के निबन्ध में भाषा-वैशिष्ट्य के प्रस्थान बिन्दु उनकी विषयानुकूलता, सहजता, स्वाभाविकता, प्रवाह एवं प्रभावोत्पादकता कहे जा सकते हैं। सहज, खरी और पारदर्शी अभिव्यक्ति के कारण वे अन्य निबन्धकारों से भिन्न ही नहीं, अपितु हिन्दी निबंध साहित्य में अपनी पहचान कायम करने में सफल हुए हैं। उनकी निबन्ध भाषा में रागात्मकता और बौद्धिकता कदम-ब-कदम मिलाकर साथ चलती है, जिसके कारण सहज रूप में पाठक को ज्ञान संवेदन हो जाता है। निबन्ध में निरूपित घटना दिनकर के हाथों में सजीव हो उठती है तो कोई गुरु गम्भीर विषय सहज ग्रहणीय बन जाता है तथा चिन्तन में गुथे हुए सूत्र खुले रूप में व्यक्त हो जाते हैं। वस्तुतः भाषा में उनके साहित्यिक व्यक्तित्व का आतंक कहीं भी दिखाई नहीं देता है। हां, दिनकर का कवि मन उन्मुक्त होकर निबन्धों में विचरता भासित होता है, जो प्रकारान्तर से भाषा की शक्ति सम्पन्न ही करता है। इसी प्रयोग-धर्मी विचार बिन्दु को हम दिनकर की निबन्ध भाषा का प्राण तत्व कह सकते हैं।

रामधारी सिंह दिनकर के निबन्धों की भाषात्मक संरचना के वैशिष्ट्य का मूल्यांकन निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है—

1 शब्द चयन और रचना विधान
2 मुहावरे—लोकोक्तियों का प्रयोग

---

1 डा० रामस्वरूप चतुर्वेदी—भाषा और संवेदना, पृ० 12-13

3. काव्यात्मक सरसता का पुट
4. चित्रात्मकता
5. सूत्रात्मकता

शब्द चयन और रचना विधान

शब्द भाषा की इकाई माना जाता है। भाषा शब्दो से ही बनती है। अतएव अभिव्यक्ति का आधार होता है—शब्द चयन और उनका क्रम। दिनकर ने भी शब्द चयन और शब्द प्रयोग को महत्त्वपूर्ण माना है। इस प्रसग मे उन्होने 'मिट्टी की ओर' सग्रह मे लिखा है—"कवि मानस की सबसे बडी क्रियापूर्ण स्थिति उस समय उत्पन्न होती है जब वह अपनी कल्पना की अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल तथा शक्तिशाली शब्दो को चुनने की चिन्ता करता है और इसी कार्य की सफलता से उस महान् आश्चर्य का जन्म होता है जिसके सामने समालोचना पराजित हो जाती है।"[1] उपयुक्त शब्द चयन के अभाव मे साहित्य मे कलात्मकता के निर्वाह को वे सदिग्ध मानते है।[2] रचनाकार की पकड मे शब्द भण्डार कौशल से नहीं आता अपितु वह अन्तर्दृष्टि और सहज वृत्ति के अनुसार भाव और विचार को अनुकूल शब्दो मे व्यक्त करता है। शब्द चयन ही शैली और भाव के मध्य सामजस्य उत्पन्न करता है। शब्द के रूप गुण की सही पहचान रचनाकार के लिए आवश्यक होती है, जो "दीर्घ साधना की गहन भूमिका मे गोते लगाने से मिलती है।" शब्द चयन की कसौटी पर दिनकर का निबन्ध साहित्य खरा उतरा है। शब्द की शक्ति, रूप एव गुण के वे सच्चे पारखी है। अन्त स्थ भावो की सप्रेषणीयता मे पूर्णतः सक्षम है।

वैविध्यपूर्ण शब्दावली का प्रयोग दिनकर के निबन्धो की भाषात्मक सरचना-सामर्थ्य को व्यजित करता है। उदाहरणार्थ दिनकर के निबन्धो म प्रयुक्त कुछ शब्द प्रस्तुत है—

सस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली

विरक्त, अनुरक्त, अपरिग्रह, प्रच्छन्न, भृग, अतिरजन, अभिनव, गह्वर, आक्रान्त, गवेषणा, उर्वर, प्रखण्ड; मध्याह्न, स्रष्ट, उत्स, मार्जन, तृष्णा, उत्कट स्पर्धा, सम्पृक्त, अरण्य, मजूषा, अभ्युत्थान, द्विधा, वैवल्य, श्लाघ्य, विविक्षा आदि।

---

1 मिट्टी की ओर, पृ० 117
2 वही, पृ० 151

देशज शब्दो का प्रयोग

दिनकर जी ने अपने निबन्धो की भाषा मे लोकमानस मे व्याप्त तद्‌भव शब्दो के प्रयोग से भी विशिष्ट प्रभाव उत्पन्न किया है । कुछ प्रयुक्त देशज शब्द इस प्रकार है—अलबत्, लोट-पोट कर, निरी-कोरी, ढब-ढाचे, माथापच्ची, भोंडी आदि ।

उर्दू

रिवाज, हवाला, कवायद, इल्जाम, तफसील, मिल्कियत, मनसूबा, मखौल, एहसास बेखौफ जुल्म, तल्खी, बख्शिशे, बर्खास्त, मुआफिक, जनाजा, जमहूरियत लिबास, खता, बदतर, तहजीब, हाफिज, चन्दवो, नेमतो आदि । दिनकर ने अपने नियन्धो म उर्दू के ऐसे शब्द प्रचुर मात्रा म प्रयुक्त किए हैं, जो, भाषा को सहज और सप्रेषणीय बनाते हैं ।

अगरेजी

रिफार्मेशन, इम्प्रेशन, शार्टकट, एम्बिग्विटी, गियर, फ्लुइड, लेबड, स्पिरिट, क्लासिक, रेस्टोरेशन, फ्लेक्सीबिलिटी मेटा फिजिकल, रेजीमेटेशन, रेनेसा' टेकनीक, अप स्टार्ट इन्टेलेक्चुअल आदि ।

शब्द चयन के अतिरिक्त इन भाषाओ मे प्रयुक्त उद्धरणो को भी नि'सकोच प्रयुक्त किया गया है । यथा—

> "सम्मान से ब्राह्मण उसी प्रकार भागे, जैसे मनुष्य जहर से भागता है और अपमान की कामना वह उसी प्रकार करे जैसे लोग अमृत की कामना करते हैं ।
>
> अर्चित पूजितो विप्र दुग्ध गौरिव सीदति । अर्थात् अर्चित पूजित विप्र दुही हुई गौ के समान सूख जाता है ।"[1]

अथवा—

> 'Earth is crammed with heaven
> And every common bush afire with God '[2]

दिनकर जी इन प्रयोगो से अपनी निबन्ध भाषा को नया तेवर देने म सफल हुए हैं । इससे शैली म एक नयी सरसता और बात को प्रभावशाली ढग से कहने की शक्ति बढ गई है । दिनकर ने पारिभाषिक शब्दावली का भी प्रचुर प्रयोग किया है । यथा—राष्ट्र प्रेरणा, त्रिवर्ग, सहज ज्ञान, निवृत्ति प्रवृत्ति, आध्यात्म-

---

1 शुद्ध कविता की खोज, पृ० 168
2 अर्धनारीश्वर पृ० 167

वाद, उपचेतन, अतिमानस, चेतना शक्ति, अस्तित्व, द्रव्य, अपस्टार्ट, रेनेसा, क्लासिक आदि का प्रयोग उनकी शब्द सामर्थ्य के ही द्योतक है।

मुहावरे एवं लोकोक्तियों का प्रयोग

मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग निबन्धों की भाषा में नई अर्थवत्ता और स्फूर्ति प्रदान करता है तथा भावों को सक्षमता से सम्प्रेषणीय बनाता है। इनके प्रयोग से भाषा में लाक्षणिकता एवं व्यंग्य का पैनापन भी आ जाता है। दिनकर जी ने अभिव्यंजना शक्ति एवं विवेचनात्मक सौंदर्य की सृष्टि के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों के अनेक प्रयोग किये हैं। यथा—

लग मारना, खट्टे अंगूर, आख मिचौनी खेलना, मील का पत्थर, काग इस डाल से उडकर उस डाल पर बैठना, दूर के ढोल सुहान, लिखत सुधाकर लिखिएगा, राहू आदि।

काव्यात्मक सरसता का पुट

दिनकर जी सहृदय रचनाकार हैं, उनकी प्रतिभा बहुमुखी होते हुए भी वे मूलतः कवि ही हैं। काव्येत्तर विधाओं में उनका कवि व्यक्तित्व यत्र-तत्र प्रतिबिम्बित होता है। उनके निबन्ध इसके अपवाद नहीं हैं। उनके भावात्मक, विचारात्मक एवं विवरणात्मक निबन्धों में प्रायः काव्यात्मक भाषा का प्रयोग मिलता है। इन निबन्धों में अलंकारिता विद्यमान है। इन अलंकारों के प्रयोग से भाषा में माधुर्य और सौंदर्य की सृष्टि हुई है। इस प्रकार के प्रयोग पाठक के मन को बाधने में सक्षम है। कविता में प्रयुक्त उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण आदि अनेक अलंकार निबन्धों की गद्य भाषा में स्वाभाविक रूप से प्रयुक्त हुए हैं। भाषा की यह प्रवृत्ति उनके कवि हृदय की ही प्रतिकृति है। भाषा का सहज प्रवाह और प्राणवत्ता इन्हीं तत्त्वों के कारण है।

भाषा में काव्यात्मकता के पुट से चमत्कृत उनके निबन्धों के कतिपय उद्धरण द्रष्टव्य हैं—'एक तरह से समझिए तो चालीस की उम्र निराशा और उदासी की सूखी घडी न होकर आशा और उल्लास की ही नई बरसात है। जो घटा अपनी रंगीनियों के साथ आकाश के कोने-कोने में आनंद से मण्डरा रही थी, अब वह बरसने वाली है। यह वह मौसम है, जब आम में फल लगते और पक कर तैयार होते हैं। यह ठीक है कि जब कोमल मंजरियों के कुंज में प्रवेश करती है, तब प्राणों को पागल कर देने वाली सुगंध उसके कण्ठ से निकलने वाली प्रत्येक पुकार को कविता का उच्छ्वास बना देती है। मगर रसाल जब पक कर तैयार हो जाता है, तब उसे चूसने वाले रसज्ञ की भी आखें आनंद की सिरहन से बंद हो जाती

हैं। पके हुए फल के भीतर भी एक कविता है, जो सिर्फ सूंघने की वस्तु नहीं, बल्कि रक्त में मिला लेने की चीज है।"[1]

वाणी का ओज एवं वीर रसात्मक मनोभाव इस निबंधांश में देखने योग्य है—"बरसों से देश के शेर सीखचों में बंद हैं और बाहर शृगाल और भेड़िये अपनी तुरही बजा रहे हैं। देश ने गर्जन किया, लेकिन बंदीगृह के प्राचीर नहीं गिरे। देश ने तप्त आहें भेजीं, लेकिन सीखचे गले नहीं, कड़ियां पिघली नहीं। देश ने आक्रोश भेजा, लेकिन प्रलय के बादल घुमड़कर रह गये, शाप का एक वज्र भी आततायियों पर नहीं गिरा सके, क्रोध, आक्रोश, गर्जन, आंसू और आह, सब के सब बेकार हुए। अस्सी वर्षों की कठिन तपस्या जब सफल होने जा रही थी, ठीक तभी इंद्र का आसन डोल गया। मार ने आकर अभियानियों का मार्ग घेर लिया। निर्भीक प्रवाहित होने वाला निर्झर सहसा ठिठककर रुक गया। वर्षों से उद्दीप्त होकर जलने वाली आग ने अपनी लपटें समेट लीं, मानो किसी दुष्ट देवता ने उसकी गति बांध दी हो।"[2]

दिनकर जी के निबन्धों की भाषा में कहीं-कहीं तत्सम शब्दावली का प्रयोग हुआ है तो वहीं जमकर उर्दू शब्दावली का आधिपत्य भी दृष्टिगत होता है। कभी-कभी निबन्ध भाषा की ये दोनों प्रवृत्तियां एक ही निबन्ध में परिलक्षित होती हैं। जैसे—"भूगोल ने भारत की जो चौहद्दी बांध दी है उसके साथ दस्तदाजी करने की कोशिश कभी भी कामयाब नहीं हुई।'''हम दुनिया के किसी ऐसे हिस्से को भारत के साथ बांध रखने की कोशिश करें जो भारत की चौहद्दी से बाहर पड़ता है और जिसे भारत का भूगोल अपने भीतर पचा नहीं सकता। दुनिया के हिस्से को काटकर उसे भारत के साथ मिला रखने का काम उतना ही अप्राकृतिक साबित हुआ है जितना कि हिन्दुस्तान के किसी अंग का काटकर उसे अलग जिंदा रखने की कोशिश।"[3]

दिनकर की भाषा का एक गुण ओज है। ओज की गुणात्मक सिद्धि दिनकर की पद्य भाषा में ही नहीं हुई अपितु निबंध जैसी गद्य संरचना में भी हुई है। सन् 1944 में लिखित 'हड्डी का चिराग' शीर्षक निबन्ध में वे परतंत्र भारत के जन-जन को उद्‌बोधन शैली में जो संदेश देते हैं वह भाषा में 'ओज' की सृष्टि का परिचायक है—"ज्योतिर्मय मनुष्य! तू अपने को भूल रहा है। तुझ में बुद्ध का तेज है, जिसने स्वर्ग और पृथ्वी दोनों के लिए प्रकाश का निर्माण किया था। तुझ में राणा प्रताप का प्रताप है, जिसने वन-वन मारे-मारे फिरकर भी अपने

1. रेती के फूल, पृ० 18
2 अर्धनारीश्वर, पृ० 10-11
3 रेती के फूल, द्वितीय संस्करण—भारत एक है, पृ० 141

आदर्श के प्रदीप को बुझने नही दिया। तुझ मे मसूर की जिद है, जिसके मर जाने पर भी उसके मास की बोटी-बोटी 'अनलहक' पुकारती थी। आज का घनान्धकार तेरे पौरुष को चुनौती दे रहा है। नीद से जाग। आलस्य को झाडकर उठ खडा हो। सूरज और चाद के प्रकाश मे चलने वाले बहुत हो चुके है। इतिहास उनकी गिनती नहीं करता। आज तुझे अपने भीतर के तेज को प्रत्यक्ष करना है। तेरे लहू मे तेल, शिक्षा मे वर्तिका और हड्डी मे चिराग है। मिट्टी के दीये शाम को जलते और सुबह से पहले ही बुझ जाते हैं। आज दीवाली की रात अपनी हड्डी के उस चिराग को जला, जिसकी लौ सदियो तक जलती रहती है।"[1]

'हिम्मत' और 'जिन्दगी' शीर्षक निबन्ध मे व्यक्ति के चरित्र की मनोवैज्ञानिक व्याख्या का आलकारिक दृश्य दर्शनीय है—"जो लोग पाव भीगने के खौफ से पानी से बचते रहते हैं, समुद्र मे डूब जाने का खतरा उन्ही के लिए है। लहरो मे तैरने का जिन्हे अभ्यास है, वे मोती लेकर बाहर आयेंगे। चादनी की ताजगी और शीतलता का आनन्द वह मनुष्य लेता है, जो दिन भर धूप मे खटकर लौटा है।"[2]

प्रवाह-शैली मे आलकारिकता के वैभव निदर्शनीय यह अश भी उद्धरणीय है—"विचारो के ढाचे मे कही कोई तत्त्व है जो फेन और बुदबुद का विरोधी है, जो इन्द्र धनुप को धरती की वेणी पर बाधना चाहता है, जो चादनी को समेट कर शीशी मे बंद कर देना चाहता है और जिसे यह चिंता सताती है कि अधकार और प्रकाश इस प्रकार निरवयव होकर क्यो फैले ?"[3]

दिनकर जी वस्तुत जिन निबन्धो मे कल्पना के रगीन आवरण से अपने भावो के परिधान भाषा को पहनाकर काव्यात्मक रूप मे सामने लाते हैं, भाषा मे भाव गाम्भीर्य के साथ-साथ आकर्षण भी उत्पन्न हुआ है।

चित्रात्मकता

दिनकर जी ने चित्रात्मकता को गद्य और पद्य दोनो मे सौंदर्य का विधायक तत्त्व माना है। काव्य के सदर्भ मे तो वे इसे अपरिहार्य मानते हैं। उनके निबन्धो मे चित्रात्मकता की वृत्ति को स्पष्टत लक्षित किया जा सकता है। वह अर्थवत्ता, सम्प्रेषण एवं सार्थकता का कारक बनकर निबन्धो मे प्रयुक्त हुई है। वे उपमाओ के बल पर उन्हे ऐन्द्रिय स्वरूप प्रदान कर देते हैं। उनके निबन्ध चित्रात्मकता की कसौटी पर सर्वथा खरे उतरते है। भावात्मक एव विवरणात्मक निबन्धो मे चित्रोपम भाषा के उत्कृष्ट स्थल सजोये गए हैं। यथा—

---

1. अर्धनारीश्वर, हड्डी का चिराग, पृ० 12
2. रेती के फूल, पृ० 1-2
3. अर्धनारीश्वर, पृ० 120

(क) "मानवता अधकार की कारा मे युद्ध कर रही है। संसार के कोने-कोने मे इस प्राचीर पर प्रहार किये जा रहे है। पता नही, यह प्राचीर पहले कहा टूटेगा। मगर जहा भी टूटे प्रकाश का जो प्रवाह फूट निकलेगा, वह एक-दो खडो को नही समस्त मानवता को प्लावित करेगा।"[1]

(ख) "कार्तिक अमावस्या की मरणी हिन्दू-इतिहास मे आलोक की लडी बनकर चमकती आयी है। प्रत्येक वर्ष की एक अधेरी रात को भारत की मिट्टी अपने अग मे असख्य दीपो के गहने पहनकर तारो से भरे आकाश से होड लेती है और आदर्शनिष्ठ हिन्दू प्रकृति को यह सदेश देता है कि काल निर्मित कुरूप अधकार को वह सौदर्य और ज्योति दे सकता है।"[2]

अभिव्यक्ति की स्पष्टता हेतु दिनकर द्वारा पौराणिक प्रसग का यह चित्र-विधान उनकी भाषा को प्राणवान् बनाता है—"सभ्यता की विशाल अट्टालिकाओ पर मस्तिष्क हनुमान बन कर ज्ञानाग्नि से सबको दग्ध करता हुआ उछल रहा है और नीचे अशोक के उपेक्षित वन मे हृदय की सीता वन्दिनी और उदास बनकर जी रही है।"[3]

सूत्रात्मकता

दिनकर जी ने सूत्रात्मक वाक्यो के प्रयोग से अपने निबन्धो की भाषा को अर्थ-गाम्भीर्य एव उक्ति वैचित्र्य प्रदान किया है। विचारो की अभिव्यक्ति हेतु सरल एव छोटे वाक्यो का प्रयोग दिनकर के निबधो की भाषा को जीवंत बनाता है। इस विधि से भाषा सौष्ठव, कसाव, और प्रभाव मे वृद्धि हुई है। उदाहरणार्थ दिनकर जी के निबन्धो मे प्रयुक्त कुछ सूत्र वाक्य द्रष्टव्य हैं—

"ईर्ष्या का काम जलाना है, मगर सबसे पहले उसी को जलाती है, जिसके हृदय मे उसका जन्म होता है।"

('ईर्ष्या तू न गई मेरे मन से')

"मस्तिष्क सिद्धात बनाता है, हृदय उस सिद्धात के प्रति आस्था उत्पन्न करता है।"

"मस्तिष्क आदर्श की रचना करता है, हृदय उस सिद्धात के प्रति आस्था उत्पन्न करता है।"

('हृदय की राह'—रेती के फूल)

"मन्दिर है उपासना का स्थल, जहा मनुष्य अपने आपको ढूढता है।"

---

1. दिनकर—अर्धनारीश्वर, पृ० 5
2. वही, पृ० 10
3. वही, पृ० 149

"राज भवन है दण्ड-विधा की आवाज, जहां मनुष्यों को शान्त रहने का पाठ पढ़ाया जाता है।"

('मंदिर और राजभवन'—अर्धनारीश्वर)

भाषा में सूत्रात्मकता का समावेश थोड़े में बहुत को जीवन्त प्रस्तुति देता है।

निष्कर्ष

दिनकर जी के निबन्धों की भाषा का अध्ययन हमें कुछ ऐसे तथ्यों से साक्षात्कार कराता है, जिनके आधार पर हम उन्हें भाषा-शिल्पी रचनाकार कह सकते हैं। यों तो हिन्दी के मूर्धन्य समालोचकों की दृष्टि में दिनकर के भाषा-शिल्प का प्रतिमान 'उर्वशी' नाट्य प्रबन्ध है; किंतु 'उर्वशी' में संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली के प्रयोगों का ही वैशिष्ट्य है; जो सामान्य पाठक के लिए दुर्गम नहीं तो दुष्कर अवश्य है। इसके विपरीत दिनकर जी के निबन्धों की भाषा में विषय के अनुरूप ढलने की अद्भुत शक्ति है। वे विषय की सरलता और गहनता के अनुरूप निबन्धों में भाषा का चयन करते हैं। एक समर्थ शब्द-शिल्पी के संस्कारों से सम्पन्न होने के कारण दिनकर जी नये-नये शब्द गढ़ते हैं, पुराने शब्दों में नई आभा निष्पन्न करते हैं, सुबोध भाषा में धारदार व्यञ्जकता उत्पन्न करते हैं और सबसे बड़ी बात भाषा में सम्प्रेषणीयता के गुण को बरकरार रखते हैं। दिनकर जी के निबन्धों की भाषा में ओज के साथ लालित्य का समावेश एक विरल उपलब्धि है। भाषा पर पूर्णाधिकार होने के कारण दिनकर जी निबन्धों में दुरूह विषयों को सुगमता से प्रस्तुत करने की असाधारण क्षमता का परिचय देते हैं। उनके साहित्य समालोचना संबंधी निबन्धों में इस क्षमता को लक्षित किया जा सकता है। वस्तुतः दिनकर के निबन्धों की भाषात्मक संरचना की उपलब्धि एक विरल सहजता और सम्प्रेषणीयता ही है।

ग्रन्थानुक्रमणिका

आधार-ग्रंथ

1 रामधारी सिंह दिनकर — अर्द्धनारीश्वर
2 रामधारी सिंह दिनकर — काव्य की भूमिका
3 रामधारी सिंह दिनकर — मिट्टी की ओर
4 रामधारी सिंह दिनकर — रेती के फूल
5 रामधारी सिंह दिनकर — वट-पीपल
6 रामधारी सिंह दिनकर — वेणुवन
7 रामधारी सिंह दिनकर — शुद्ध कविता की खोज
8 रामधारी सिंह दिनकर — साहित्यमुखी

संदर्भ ग्रंथ

1 आनन्दवर्धन — ध्वन्यालोक
2 कांतिमोहन — कुरुक्षेत्र की मीमांसा
3 (डा०) कैलाशचन्द्र माथुर — पाश्चात्य निबंध कला
4 कौल एवं शास्त्री (स०) — दिनकर सृष्टि और दृष्टि
5 (डा०) गणपतिचन्द्र गुप्त — साहित्यिक निबंध
6 (डा०) गुलाबराय — काव्य के रूप
7 गोपालराय — समीक्षा
8 (डा०) गंगाप्रसाद गुप्त — हिन्दी साहित्य में निबंध और निबंधकार
9 जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी — दिनकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व
10 (डा०) जयनाथ नलिन — हिन्दी निबंधकार
11 दण्डी — काव्यादर्श
12 (डा०) देवीप्रसाद गुप्त — साहित्यिक निबंध
13 (डा०) देवीप्रसाद गुप्त — स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी महाकाव्य
14 (डा०) देवीप्रसाद गुप्त — हिन्दी महाकाव्य सिद्धांत और मूल्यांकन
15 (डा०) देवीशरण रस्तोगी — हिन्दी साहित्य का विवेचनात्मक इतिहास
16 (डा०) नगेन्द्र (स०) — हिन्दी काव्यालंकार सूत्र
17 (आचार्य) नन्ददुलारे वाजपेयी — निबंध निलय
18 (कु०) पद्मावती — दिनकर व्यक्तित्व एवं कृतित्व

19. प्रतापचन्द जैसवाल : राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना
20. (डा०) प्रतिभा जैन . दिनकर ' काव्य कला और दर्शन
21. (डा०) प्रभाकर माचवे : हिन्दी निबन्ध
22. पातंजलि : महाभाष्य
23. बाणभट्ट : हर्षचरित
24. भगवतशरण उपाध्याय : समीक्षा के सदर्भ
25. (डा०) भगवतीचरण वर्मा . आज के लोकप्रिय कवि रामधारी सिंह दिनकर
26. (डा०) भरतमुनि : नाटयशास्त्र
27. (डा०) भागीरथ मिश्र : काव्यशास्त्र
28. (डा०) भोलानाथ : हिन्दी साहित्य
29. (डा०) भोलानाथ तिवारी : शैली विज्ञान
30. मन्नूलाल द्विवेदी (स०) . आलोक धन्य प्रतिभा के धनी दिनकर
31 मन्मथनाथ गुप्त : रामधारी सिंह दिनकर
32. मम्मट : काव्य प्रकाश
33. (डा०) माधुरी दुबे हिन्दी गद्य का वैभव
34. (प्रो०) मुरलीधर श्रीवास्तव . युग कवि दिनकर
35. (डा०) रमारानी सिंह दिनकर साहित्य मे व्यक्ति की अभिव्यक्ति
36. (डा०) रामकुमार वर्मा : साहित्य शास्त्र
37. रामगोपालसिंह चौहान : हिन्दी के गद्यकार और उनकी शैलियां
38 (डा०) राधव प्रकाश : शैली विज्ञान और पाश्चात्य एव भारतीय साहित्य शास्त्र '
39. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल : हिन्दी साहित्य का इतिहास
40 रामधारीसिंह दिनकर : उजली आग
41. रामधारीसिंह दिनकर . कोयला और कवित्व
42. रामधारीसिंह दिनकर : चक्रवाल
43. रामधारीसिंह दिनकर : जीवन वृत, व्यक्तित्व और कृतित्व
44. रामधारीसिंह दिनकर : दिनकर की डायरी
45. रामधारीसिंह दिनकर : पंत, प्रसाद और मैथिलीशरण गुप्त
46. रामधारीसिंह दिनकर : मृति तिलक
47. रामधारीसिंह दिनकर : राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता
48. रामधारीसिंह दिनकर : रेणुका
49. रामधारीसिंह दिनकर : लोकराज दिनकर
50 रामधारीसिंह दिनकर : साहित्य मे व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति
51. रामधारीसिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय
52. रामधारीसिंह दिनकर : हारे को हरिनाम
53. रामधारीसिंह दिनकर . हुंकार
54 (डा०) रामविलास शर्मा : भारतेन्दु युग

55 (डा०) रामस्वरूप चतुर्वेदी — भाषा और संवेदना
56 (डा०) लक्ष्मीनारायण सुधांशु — दिनकर
57 (डा०) लक्ष्मीनारायण सुधांशु — हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास
58 वामन — काव्यालंकार सूत्र वृत्ति
59 (प्रो०) विनोदबाला शर्मा — दिनकर के काव्य में जीवन दर्शन
60 विश्वनाथप्रसाद मिश्र — हिन्दी का सामयिक साहित्य
61 श्यामसुन्दरदास — साहित्यालोचन
62 (डा०) शिवकुमार शर्मा — हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियां
63 शिवदान सिंह चौहान — साहित्यानुशीलन
64 शिवदान सिंह चौहान — हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष
65 (डा०) शिखरचन्द्र जैन — राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी काव्यकला
66 (डा०) सावित्री सिन्हा — युगचारण दिनकर
67 (प्रो०) सिद्धेश्वरप्रसाद (सं०) — राष्ट्रकवि दिनकर एवं उनकी साहित्य साधना
68 आचार्य सीताराम चतुर्वेदी — समीक्षाशास्त्र
69 (प्रो०) सुधीन्द्र — हिन्दी कविता का क्रांतियुग
70 आचार्य डा० सुरेन्द्रदेव शास्त्री — राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना
71 (डा०) सुशीला मिश्रा — दिनकर की साहित्य दृष्टि

अंगरेजी

72 एनविष्ट — लिंग्विस्टिक एण्ड स्टाइल
73 एफ०एल० लुकास — स्टाइल
74 गेटे — ए आयरॅम स्टाइल इज द फेथफुल कापी आफ हिस माइन्ड
75 ग्रीनी — आर्ट्स एण्ड आर्ट क्रिटिसिज्म
76 जे० वाल्बर्ग — सम आस्पेक्टस आफ स्टाइल
77 लुई ददले — द ह्यू मिनीटिज
78 एम० ग्राफर्वर्को — द राइटर्स क्रियेटिव इन्डीविजुवेलिटी एण्ड द डेवलपमेंट आफ लिट्रेचर
79 मिल्टन मरि — द प्रोबलम आफ स्टाइल
80 टी०ई०ह्यूम — नाट्स आन लैंग्वेज एण्ड स्टाइल

कोश एवं विश्वकोश

1 धीरेन्द्र वर्मा — हिन्दी साहित्य कोश
2 टी० एडवर्ड — द न्यू डिक्शनरी आफ थाट
3 वाल — एनसाइक्लोपीडिया आफ ब्रिटानिका

पत्र-पत्रिकाएं

1 आजकल
2 दिनकर स्मृति अंक
3 धर्मयुग, 21 अक्टूबर, 1972
4 साप्ताहिक हिन्दुस्तान

□□